वेद ईश्वरीय वाणी

वर्ष : 11 अंकः 1 अप्रैल 2021 – सितम्बर 2021 अर्द्ध–वार्षिक

वेदज्ञ आचार्य द्वारा शुद्धता प्रदान

''वाचं ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि, चक्षुस्ते शुन्धामि श्रोत्रं ते शुन्धामि नाभिं ते शुन्धामि मेढ्रं ते शुन्धामि, पायुं ते शुन्धामि चरित्राँस्ते शुन्धामि''

(यजुर्वेद मन्त्र 6/14)

हे शिष्य! (ते) तेरी (वाचम्) वाणी को (शुन्धामि) निर्मल करता हूँ (ते प्राणम् शुन्धामि) तेरे प्राणों को निर्मल करता हूँ (ते चक्षुः शुन्धामि) तेरे चक्षु को निर्मल करता हूँ (ते) तेरे (श्रोत्रम् शुन्धामि) श्रोत्र को निर्मल करता हूँ (ते नाभिम् शुन्धामि) तेरी नाभि को निर्मल करता हूँ (ते मेढ्रं शुन्धामि) तेरी उपस्थ इन्द्रिय को निर्मल करता हूँ (ते पायुम् शुन्धामि) तेरी गूदेन्द्रिय को निर्मल करता हूँ (ते चरित्रान् शुन्धामि) तेरे चरित्र को निर्मल करता हूँ।

भावार्थः– वेद–विद्या का ज्ञाता, आचार्य अपनी वैदिक शिक्षा द्वारा शिष्य की उपरीलिखित वाणी, प्राण आदि सभी इन्द्रियों को निर्मल करता है। फलस्वरूप ही उसका विद्यार्थी बड़ा होकर श्रीराम, श्रीकृष्ण, युधिष्ठिर, सीता, मदालसा आदि विभूतियों सा चरित्र धारण करके जनता एवं देश का कल्याण करता है।

Learned Acharya purifies aspirant

In the above quoted Yajurveda mantra, God states that learned Acharya of Vedas must strengthen the character of his student by giving him vedic preach on various issues. So, the learned Acharya states - Oh! disciple, I purify your speech, I purify your vital airs including respiratory system, I purify your eyes, I purify your ears, I purify your naval, I purify your genitals, I purify your organs of excretion, I purify your character, as well.

We must know that the above purity is not possible to be achieved based only on preach, lectures, bookish knowledge etc. It requires vedic preach and simultaneously adopting the preach/imbibing the preach in one's life by doing daily worship and practice of Yoga philosophy, say the vedas. This alone enables the devotee to control his senses and perceptions. Adoption of the said path makes one's character the purest.

वेद ईश्वरीय वाणी

मुद्रक, स्वामी एवं प्रकाशक: राज कुमार गुप्ता

संपादक: स्वामी राम स्वरूप 'योगाचार्य' (01892236107)

सह संपादक: साध्वी गीतांजली (01892236107)

उप–संपादक: सुप्रिया गन्दोत्रा (9906092521)

''वेद ईश्वरीय वाणी''

प्रकाशन: शिवा एन्कलेव, लेन नं. –3, रूप नगर, जम्मू – 180013 (जम्मू व कश्मीर)

डी.डी. रिप्रोग्राफिक्स

3–एकता आश्रम न्यू रिहाड़ी, जम्मू –180005 (जम्मू व कश्मीर) से मुद्रित

ओ३म्

विषयानुक्रमणिका

ओ३म्

वेदज्ञ आचार्य द्वारा शुद्धता प्रदान – यजुर्वेद मन्त्र 6/14			1
सम्पादकीय	–	स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'	3
नारी में अपार शक्ति	–	साध्वी गीतांजलि	9
Mutual Tolerance is necessary...	-	**Sapna Dogra**	**12**
सत्संग का प्रभाव	–	ऋचा कौशिक	15
Vedas & Women	-	**Swami Ram Swarup 'Yogacharya'**	**18**
पौर्णमासी और अमावस्या			20
सेवा	–	शीतल गुप्ता	21
Coronary Heart Disease	-	**Dr. Somya Grover**	**25**
धनुरासन	–	स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'	27
Correspondence between Swami ji & S. Khushwant Singh ji			**28**
गुरु–शिष्य संवाद	–	स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'	33
Satsang & Ashrams	–	**Seema Dogra**	**37**
विद्वानों के संग से होने लगी....	–	अंजना दीवान (इन्डोनेशिया)	41
वेद कहें – शाकाहारी भोजन ही करें	–	स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'	45
Over Come Death	-	**Swami Ram Swarup 'Yogacharya'**	**48**
वेद विद्या द्वारा प्रदूषण नाश	–	स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'	51
Materialism & Spiritualism	-	**Swami Ram Swarup 'Yogacharya'**	**56**
मानव धर्म	–	स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'	59
Pomegranate	-	**Sugandh 'Sudhi'**	**63**
Subscription Form			

NOTE : Writers are responsible for their own articles

संपादकीय

आज का मानव भौतिकवाद की चमक–दमक और विषय–विकारों आदि में इतना मस्त हो गया है कि उसको मनुष्य का ध्येय– ***''ईश्वर प्राप्ति है''*** यह समझाना अति कठिन ही नहीं प्रायः असम्भव सा हो गया है। यह सचमुच में मानव जाति पर एक कहर ही है क्योंकि यह एक कटु सत्य है कि ईश्वर भक्ति के बिना कोई भी सुखी नहीं रह सकता।

यजुर्वेद मन्त्र 7/29 का भाव है कि हम चेतन जीवात्माएँ हैं, शरीर नहीं हैं। हम सब माता के गर्भ में कर्मानुसार एक चेतन जीव के रूप में ही आते हैं। ***अथर्ववेद में*** कहा कि हम अर्थात् यह जीवात्मा अस्थि, पिंजर, माँस, रक्त, नस–नाड़ियों आदि से रहित हैं और ***अति सूक्ष्म चेतन तत्त्व*** हैं जो आँख अथवा किसी भी सूक्ष्म–दर्शक (Microscope) आदि से नहीं दिखता।

यह देखो कितना आश्चर्य है कि ईश्वर अपनी सामर्थ्य से कैसे माता के गर्भ में इस जीव के ऊपर अस्थि, पिंजर, माँस आदि का शरीर और इन्द्रियाँ लगा देता है। हम इसे ईश्वर की महान कृपा मानें और उसके बताए वेद मार्ग पर चलकर उसका धन्यवाद दें अन्यथा हम अहसान फरामोश कहलाएँगे। जीवात्मा ईश्वर द्वारा दिए इस शरीर में स्थित असंख्य नाड़ियों और नाक–आँख आदि इन्द्रियों द्वारा ही संसार एवं शरीर के सब समाचार को जानने में सक्षम होता है। ईश्वर शरीर और इन्द्रियाँ ना दे तो जीवात्मा अन्धा, लूला, लंगड़ा, बहरा ही है और वह कुछ भी करने में कदापि भी सक्षम नहीं है।

ऋग्वेद हमें एक और ज्ञान देता है– ***''रूपम् रूपम् प्रतिरूपो बभूव....''*** अर्थात् यह जीवात्मा जिस शरीर में निवास करता है, उस शरीर जैसा दिखता है। जैसे–मनुष्य के शरीर में मनुष्य जैसा; पशु–पक्षी, कीट–पतंग के शरीरों में उन शरीरों जैसा लगता है परन्तु सत्य यह है कि शरीर अलग है, जीवात्मा अलग है। शरीर नाशवान है, जीवात्मा चेतन, अविनाशी तत्त्व है। ***अथर्ववेद*** कहता है–

''कः एतत् प्रष्टुम्''

अर्थात् संसार में कोई बिरला जिज्ञासु ही ***(एतत् प्रष्टुम्)*** इस ऊपर कहे ज्ञान को

पूछने के लिए ***(विद्वांसम् उपगात्)*** वेद के ज्ञाता, विद्वान् के समीप जाता है और विद्वान् के बताए ब्रह्म ज्ञान और योग विद्या की साधना द्वारा इस आत्म तत्त्व का द्रष्टा बनता है। वह जान जाता है कि शरीर में प्राण, रक्त और जीवात्मा, इस पँच भौतिक शरीर में कहाँ–कहाँ रहते हैं और इसी शरीर में ईश्वर का निवास कहाँ है। ***चारों वेद भी हमें समझा रहे हैं कि हमें ईश्वर ने मनुष्य का शरीर इसी आत्म तत्त्व को जानने के लिए ही दिया है।***

अत: हम इस भौतिकवाद की चमक–दमक में फँसने से अपना सदा बचाव करें। हम कर्त्तव्य–कर्म करें परन्तु ऊपर कहे ब्रह्म ज्ञान को जानने के लिए विद्वानों से विद्या ग्रहण करें अन्यथा हम मानव जीवन के परम लक्ष्य से भटक कर अभी भी दु:खी रहेंगे और मृत्यु प्राप्त करने के बाद अगले जन्म में भी सदा दु:खी ही रहेंगे। यदि हम दु:ख नहीं चाहते तो ***ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।***

अथर्ववेद के ***ग्यारवें काण्ड*** के ***सूक्त तीन*** में उपदेश है कि चारों वेदों में कहे ज्ञान का मुख्य विषय ऊपर लिखा ब्रह्मज्ञान प्राप्त करना ही है परन्तु प्राय: मनुष्य का यह दुर्भाग्य है कि वह जीवन में मुख्य विषय केवल विज्ञान, पढ़ाई–लिखाई, भौतिकवाद की चमक–दमक, खाना–पीना, ऐश करना, ऊँचे–ऊँचे पद प्राप्त करना तथा धन–सम्पदा एकत्र करना आदि ही मानकर पुन: कभी–कभी हफ्ते में, 15 दिन में या महीने में किसी के कहने से या ज़बरदस्ती या भय के कारण, व्यवहार के लिए ही पूजा–पाठ की तनिक सी बात करता है और प्राय: पूर्णत: ऊपर कहे भौतिकवाद की चमक–दमक में मग्न रहता है वस्तुत: इस अवस्था में कोई कभी भी सुखी नहीं रहता अपितु अविद्याग्रस्त होने के कारण ऐसी स्थिति में मनुष्य इस दु:ख को ही सुख मान बैठता है। अब ऐसे प्राणी को समझाना असम्भव सा हो जाता है क्योंकि जब तक उसके अन्दर से अविद्या नहीं निकलेगी तब तक वह कुछ भी समझने में समर्थ नहीं होगा। और जो अविद्या को ही विद्या समझ बैठा है उसके लिए क्या कहा जा सकता है? ***वह प्राणी तो स्वयं ही विद्वानों के संग बैठकर सत्य–असत्य को समझने का प्रयास करे।***

क्या कभी किसी ने सोचा है कि मनुष्य क्यों भौतिकवाद से जुड़ा रहता है और विद्वानों के पास जाकर विद्या ग्रहण नहीं करता? ऐसा होने का कारण यह है कि जैसे ऊपर कहा कि जीवात्मा अति सूक्ष्म तत्त्व है और ***अथर्ववेद मन्त्र 8/9/1*** तथा ***साँख्य शास्त्र सूत्र 1/19*** कह रहा है कि जीवात्मा नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव वाला है परन्तु

आँख–नाक आदि इन्द्रियों द्वारा संसार में प्रकृति रचित पदार्थों की ओर आकर्षित हो जाता है और यह शुद्ध–चेतन जीवात्मा प्रकृति के साथ सम्बन्ध बनाकर अविद्याग्रस्त हुआ कर्म–बन्धन आदि में फंस जाता है। ***यह जीवात्मा प्रकृति से सम्बन्ध अविवेक के कारण बनाता है।***

अविवेक का भाव है कि शुद्ध, चेतन और किसी भी कर्म बन्धन आदि से रहित जीवात्मा, प्रकृति से जुड़कर अपने इस (ऊपर कहे) शुद्ध–चेतन आदि रूप को भूल जाता है और वह, जैसा उपर कहा, भौतिकवाद की चमक–दमक और सांसारिक कर्मों में लीन हो जाता है। वह आध्यात्मिकवाद से केवल व्यवहार सा करता है जिसका कोई लाभ नहीं होता। अब इस प्रकार संसार के पदार्थों में रमे हुए जीवात्मा को कहाँ फुर्सत है कि वह ऊपर कहे ***अथर्ववेद मन्त्र*** के अनुसार ब्रह्म एवं योग विद्या को पाने के लिए किसी ***विवेकशील विद्वान् आचार्य के*** पास जाए और विद्या को प्राप्त करके विवेकशील बनकर प्रकृति के बन्धन से छूटकर गृहस्थ में रहता हुआ भी मोक्ष का सुख प्राप्त करे। स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा है कि आज के भौतिकवाद में प्राणी पढ़–लिखकर तथा ऊँचे–ऊँचे पदों में रहकर, व्यवसाय को बढ़ाकर धनवान आदि बनकर या राजनेता की कुर्सी सम्भालकर अथवा गरीबी में भी रहकर भौतिकवाद की चमक–दमक से बच नहीं पाता। केवल इसी स्थिति में रहना ही प्रकृति के बन्धन में बन्ध जाना कहा है।

यजुर्वेद मन्त्र 40/12 के अनुसार जो मनुष्य अविद्या की उपासना करते हैं, वे घोर अज्ञान में प्रवेश कर जाते हैं। इस स्थिति में ऐसे प्राणी ऊपर कहा ज्ञान न ग्रहण करने के कारण अविद्या को ही विद्या मान बैठते हैं और पढ़–लिखकर ऊँचे–ऊँचे पदों पर रहकर अथवा राजनेता, व्यवसायी, धनवान आदि बनकर भी सदा दु:खी रहते हैं। अत: अविद्या मनुष्य के लिए संसार में एक अत्यन्त दु:खदायी क्लेश है।

योग शास्त्र सूत्र 2/5 में अविद्या के चार स्वरूप कहे गए हैं–

❖ ***अनित्य को नित्य मानना*** अर्थात् प्रकृति से बनी यह सृष्टि तथा पँच भौतिक शरीर नाशवान है और हम सब प्रतिदिन देखते हैं कि शरीर एक दिन चिता पर जला दिया जाता है। परन्तु विद्वान् से विद्या का बोध न होने के कारण प्राय:प्राणी जब तक जीवित रहता है, तब तक गम्भीरता से कभी इस सत्य को नहीं जान पाता कि यह शरीर और संसार सचमुच में नाशवान है। फलस्वरूप ही प्राणी इस शरीर और भौतिक पदार्थों से मोह करता है और ब्रह्मज्ञान को कभी भी गम्भीरता से नहीं लेता। विपरीत में जो

आध्यात्मिकवाद में लगे हुए होते हैं, वे उनकी हँसी उड़ाते हैं जो एक, ईश्वर की दृष्टि में भी, घिनौना पाप है।

❖ ***अपवित्रता में पवित्रता का बोध होना*** अविद्या का दूसरा लक्ष्ण है, जैसे मानव शरीर मल–मूत्र, हड्डियों आदि गन्दगी से भरा है परन्तु प्राणी इस शरीर को अति सुन्दर और आनन्द–दायक समझता है। वेदों में माँस–मदिरा का भक्षण अपवित्र कहा है। परन्तु विद्या का बोध न होने के कारण मनुष्य इसे पवित्र मानता है।

❖ ***अनात्मा में आत्मा का बोध होना*** अविद्या का तीसरा लक्ष्ण है। जो पदार्थ नाशवान है, जैसे शरीर, उसे अविनाशी समझ बैठना।

❖ ***दु:ख को सुख समझना*** अविद्या का चौथा लक्ष्ण है जैसे कि संसार के सभी भोग पदार्थों में, विद्या का बोध न होने पर, हमें मोह हो जाता है, जो दु:खदायी है और प्राणी इनमें फँसा दु:खी रहता है परन्तु विद्या का बोध न होने के कारण, इस दु:ख को ही सुख मान बैठता है।

हमें अविद्या के इन चारों लक्षणों को गहन गम्भीरता से मनन् आदि करके समझने की आवश्यकता है अन्यथा दु:ख हमारा पीछा कभी नहीं छोड़ेगा। पुन: हम विचार करें कि जो मनुष्य इस अविद्या रूप क्लेश की उपासना करते हैं, वह गूढ़ अज्ञान में प्रवेश कर जाते हैं और अज्ञानी को तो काम–क्रोध, मद–लोभ, अहंकार, अभक्ष्य का भक्षण और भौतिकवाद की चमक–दमक आदि विषयों से ही छुटकारा नहीं मिलता और इनमें फंसकर दु:खी रहता है। प्रकृति के इन सत्त्व, रज और तम गुणों से उत्पन्न अभिमान से ग्रस्त प्राणी अविद्या का शिकार हो जाता है और संस्कृत, हिन्दी, इंगलिश या विज्ञान आदि की उच्चतम् भौतिक पढ़ाई करने का अहंकार पैदा कर बैठता है और वह, अभिमान त्यागकर, विद्वानों से वैदिक शिक्षा लेने से संकोच करता है, जिस कारण वह अपने आपको बहुत बड़ा पण्डित मान बैठता है और ***यजुर्वेद मन्त्र*** के अनुसार घोर अज्ञान में प्रविष्ट हो जाता है तथा दु:खों के सागर में गोते लगाता रहता है।

संसार में अन्याय, अत्याचार, अल्पायु में मृत्यु, भयंकर बीमारियाँ, घर–घर में कलह आदि अनेक समस्याओं के जन्म होने का कारण बस यही एक है कि मनुष्य ने भौतिकवाद को सर्वप्रथम मान लिया है और विद्या अर्थात् ब्रह्मज्ञान रूप मुख्य विषय को आज का प्राणी यह कहकर टाल देता है कि अभी तो हमारे खाने–पीने और ऐश करने के दिन है, भक्ति तो बुढ़ापे की अवस्था में करने का विषय है। ऐसे प्राणियों को बुढ़ापे में

पछतावा करते और दु:ख भोगते ही देखा गया है।

इस घोर पापयुक्त और अनेक प्रकार के दु:खों को जीवन में आमन्त्रित करने वाली वृत्ति का खण्डन करना आज वेद के विद्वानों द्वारा भी असम्भव सा प्रतीत होता जा रहा है। इसका एक विशेष कारण तो यही दृष्टिगोचर होता है कि वर्तमान में प्राय: वेद–विरोधी साधु–सन्तों ने भगवान् की प्राप्ति का, मन्तें पूरी करने का और दु:खों को पलभर में छूमन्तर से उड़ा देने इत्यादि का जो स्वयं निर्मित झूठा वेद विरुद्ध दिलासा देकर, जनता को गुमराह किया है उससे अनादि अनन्त ईश्वर से उत्पन्न दु:ख नाशिनी वेद एवं अष्टाँग योग विद्या को प्राय: मनुष्यों ने ठुकरा दिया है। ***गुरु नानक देव जी*** के शब्दों में भी देखें– ***''नानक दुखिया सब संसार''***

आज प्राणी अत्यन्त दु:ख, रोग, मानसिक तनाव, गरीबी, धन सम्पत्ति का, कन्याओं की शादी आदि की अनेक समस्याओं के कारण दु:खी है। इसीलिए वेद विरोधी साधुओं के बनाए जाल में फंस जाता है कि यह साधु–सन्त छोटे रास्ते अर्थात् शीघ्र ही मेरी समस्याओं का समाधान कर देंगे। परन्तु वेद विरुद्ध होने के कारण ऐसा होना असम्भव है और जनता झूठे वादों से लूटी जा रही है।

कहीं–कहीं तो तांत्रिक और भूत–प्रेत की पूजा करने वालों के चक्कर में आए दिन कई माताएँ–बहनें, बेटियाँ अपनी अस्मत तक गवाँ देतीं हैं और फिर टी.वी., अखबारों में ऐसे मामलों की गूँज सुनाई देती है। पुन: जो ***ब्रह्मौदनम्*** का विषय चल रहा है उस पर विचार करें कि जो ईश्वर ने वेदों में हमें दु:खों को नाश करके घर को स्वर्ग सा वातावरण देकर सुखी, लम्बी आयु व्यतीत करने के लिए मार्ग प्रशस्त किया है, उसे हम पिछले युगों की भांति शीघ्र अपनाकर ही सुखी होंगे। यह तो एक कटु सत्य है कि ईश्वर की कही बात में झूठ, छलकपट और धोखा कदापि नहीं हो सकता क्योंकि ईश्वर सत्य एवं सुखस्वरूप है। उदाहरणार्थ– ***अथर्ववेद मन्त्र 4/35/1*** में ईश्वर ने कहा

''यमोदनं प्रथमजा ऋतस्य..... तराणि मृत्युम्।''

मन्त्र का भाव है कि परमेश्वर ने सब सत्य विद्याओं के रूप में जो चारों वेदों का ज्ञान दिया ***(यम् ओदनम्)*** जिस ज्ञान रूप भोजन को प्राप्त करके अर्थात् वेदों का ज्ञान प्राप्त करके जीव ***(मृत्युम् अतितराणि)*** प्रत्येक प्रकार के रोगों, दु:खों और जन्म–मरण रूप चक्र से तर जाता है, उस ज्ञान (वेद) रूप भोजन को ही हम मनुष्य शरीर पाकर ग्रहण करे।

भाव है कि वेदविद्या को आचार्य से सुनकर अपनाएँ। यही इस ब्रह्माण्ड को रचने वाले, निराकार, सर्वव्यापक परमेश्वर द्वारा बनाया एक परम एवं कटु सत्य है जिसका किसी भी अवस्था में कोई भी विकल्प नहीं है। इस विषय में ***ऋग्वेद मन्त्र 3/56/1*** स्पष्ट कहता है कि ईश्वर के बनाए नियम अनादि, अनन्त एवं अविनाशी है अत: कभी भी किसी भी परिस्थित्ति में बदलते नहीं है। हमें ईश्वर की वाणी पर पुन: आस्था, मर्यादा लानी ही होगी अन्यथा जो आज विश्व में अकारण युद्ध, बीमारियाँ समस्याएँ, अत्याचार, अन्याय, थोथे कर्मकाण्ड, अन्धविश्वास आदि समस्याएँ दिन पर दिन बढ़ रहीं हैं, यह बढ़ती ही जाएँगी और भविष्य में माता–बहन, बेटियाँ ही नहीं अपितु पुरुष का भी आज़ादी से बाहर निकलना असम्भव सा हो जाएगा।

भाव यह है कि प्रत्येक पृथिवी रचना के आरम्भ में ईश्वर मानव जाति को वेद का ज्ञान, मुख्य रूप से ईश्वर प्राप्ति द्वारा दु:खों का नाश करके, सुखमय, दीर्घ जीवन व्यतीत करने के लिए देता है।

जैसे ***यजुर्वेद मन्त्र 4/1 में*** भी कहा– ***(पृथिव्या:)*** इस भूमि पर ***(इदम्)*** यह मनुष्य जन्म प्राप्त करके ***(देव यजनम्)*** विद्वान् के साथ यज्ञ करें अर्थात् विद्वानों का संग–सत्कार, दान आदि की सेवा द्वारा उनसे चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त करें, ईश्वर को प्राप्त करके ***(संमदेम)*** पूर्ण रूप से सदा सुखी रहें। भाव यही है कि मनुष्य जाति का मुख्य उद्देश्य ईश्वर प्राप्ति है क्योंकि ईश्वर प्राप्ति बिना सुख नहीं मिल सकता। जब पिछले युगों मे धनवान, शारीरिक शक्ति धारण करने वाले, पुत्र–पुत्रियों और नारियों से भरे परिवार वाले राजा रावण, कंस, धृतराष्ट्र आदि ईश्वर भक्ति के बिना दु:खी होकर परिवार सहित नष्ट हो गए और आज भी देख लें कि बड़े–बड़े राजनेता, धनवान व्यवसायी, और तो और, गरीब या अमीर तथा धन एकत्र करने वाले वेद विरोधी झूठे साधु धनवान होते हुए भी, उस ईश्वर की सच्ची भक्ति के बिना हर समय, हर घड़ी, कई प्रकार की समस्याओं, मुकद्दमों, बीमारियों वा मुख्यत: अविद्याग्रस्त होने के कारण काम, क्रोध मद्, लोभ, अहंकार, निन्दा, द्वेष, चुगली आदि के शिकार है। घरों में कलह रहती है।

स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'
मुख्य सम्पादक
वेद मन्दिर, योल (हि.प्र.)

नारी में अपार शक्ति

साध्वी गीतांजलि

विद्वानों द्वारा वैदिक संस्कृति ही विश्व की सनातन विद्या स्वीकार की गई है। विश्व के पुस्तकालयों में आज भी चारों वेदों को सबसे पुरातन ग्रन्थ कहलाने का गौरव प्राप्त है। इसी संस्कृति में ज्ञान–विज्ञान, कर्त्तव्य–कर्म–पूजा आदि सभी विद्याओं का भण्डार है। इसी एक आधार पर ही योगेश्वर श्रीकृष्ण महाराज ने गीता श्लोक 3/15 में कह ही दिया है कि हे अर्जुन! सब कर्म वेदों से उत्पन्न–एवं वेदों का ज्ञान

परमेश्वर से उत्पन्न हुआ है। अत: मैंने भी नारी के विषय में कुछ लिखने का आधार ईश्वरीय वाणी वेदों को ही चुना है। अथर्ववेद ने आश्चर्यचकित यह बात कह दी **'स्त्री हीं ब्रह्म बभूविथ'** अर्थात् स्त्री ब्रह्म के पद पर शोभायमान है।

ब्रह्म द्वारा ही सृष्टिरचना होती है। इसी प्रकार नारी द्वारा ही सन्तान को जन्म दिया जाता है इत्यादि। परन्तु कहा है– **"विद्या विहीन नर पशु समानः"**। अत: पुरुष हो अथवा नारी, जो कोई भी विद्या से हीन है, वह शास्त्र अनुसार पशु के समान है, जो समाज में हुड़दंग ही मचाकर परेशानी का कारण बनते हैं।

जिस प्रकार अन्धेरे का ज्ञान इस बात पर आधारित है कि हमें रोशनी का भी ज्ञान हो अथवा रोशनी के ज्ञान होने के लिए अन्धेरे का ज्ञान होना आवश्यक है ऐसे ही ज्ञानी विवेकशील नर–नारी वही है जिसको ज्ञान–विज्ञान, विद्या–अविद्या, सत्य–असत्य आदि का पूर्णत: ज्ञान हो जो कि वेदों में वर्णित ज्ञान के अभाव में असम्भव सा हो जाता है। क्योंकि अन्धेरे का ज्ञान होने पर ही रात्रि में रोशनी का प्रबन्ध किया जाता है, असत्य का ज्ञान होने पर ही कि असत्य सुनना, असत्य का ज्ञान होने पर ही कि असत्य सुनना, असत्य भाषण करना पाप है, दु:खदायी है, यह समझ आता है। असत्य का त्याग करके सत्य ग्रहण किया जाता है। विषय को अधिक विस्तार न देते हुए मैं यहाँ वेदों में कहे नारी के कुछ गुणों एवं अवगुणों को इस आशा से उद्धृत कर रही हूँ कि नारी वर्ग गुण एवं अवगुण दोनों को समझकर यथा योग्य शुभ कर्म करे।

साथ ही इस सत्य को मैं अवश्य बताना चाहूँगी, यह सब ज्ञान मेरा अपना नहीं है बल्कि अपने **योगेश्वर आचार्य महामहिम रामस्वरूप जी महाराज** के श्रीमुख से सुना हुआ है जिनके चरणों में स्थान पाकर मैं धन्य हुई हूँ।

जहाँ ईश्वर ने वेदों में सब पदार्थों सहित नारी के स्वरूप, गुण तथा गरिमा आदि का सत्य वर्णन किया है, वहीं नारी के दोषों का भी वर्णन है। जिन्हें सीता, मदालसा, गंगा जैसी महान नारियों ने बचपन से ही आचार्यों के मुख से सुना और वे आजीवन उन दोषों से

सावधान रहीं।

अथर्ववेद मन्त्र 2/14/1 में ईश्वर ने स्पष्ट नारी के दोषों का वर्णन करते हुए ज्ञान दिया है कि ऐसे अवगुणों से युक्त नारी पत्नी न होकर 'पिशाची' की संज्ञा वाली होती है, जो कि घर से ''नाशयाम:'' अर्थात् दूर करने योग्य है। मन्त्र के अनुसार ऐसी नारी (1) 'नि:सालाम्' अर्थात् लड़—झगड़कर बन्धुओं को घर से दूर करती है, फूट डलवाने वाली होती है (2) 'धृष्णुम्' अर्थात् भय उत्पन्न करने वाली है (3) 'धिषणम्' अर्थात् बड़ों का निरादर करने वाली है। (4) ''एकवाद्याम''—अर्थात् कठोर बोलने वाली ज़िद्दी स्वभाव की है (5) ''जिघत्स्वम्'' अर्थात् सर्वदा भक्षणशीला है। (6) 'सर्वा: चण्डस्य नप्त्य:' अर्थात् क्रोध से भरी हुई। (7) 'सदान्वा:' सदा बोलती ही रहती है। ऐसी पत्नी पति की अल्पायु का कारण बनती है।

आगे **अथर्ववेद मन्त्र** 14/2/75 में ईश्वर ने नारी के गुणों का वर्णन किया है कि नारी अपने धर्म में तत्पर होती हुई **'शतशारदाय'** सौ वर्ष तक, **'दीर्घायुत्वाय'** दीर्घायु प्राप्त करे, वह **'सुबुधा'** सुन्दर बुद्धि वाली हो, **'बुध्यमाना'** बुद्धिमानी द्वारा पापयुक्त कर्मों से सावधान रहे, वेदों की सुनने वाली हो, **'प्रबुध्यस्व'** वह उत्तम प्रकार से जागती रहे अर्थात् धर्म की तरफ जागरुक हो, आलस्य आदि विषय—विकारों की नींद से जागी हुई हो। वह **'गृहात् गच्छ'** घर के कार्यों को प्राप्त करे, अपने घर के कामों में कुशल हो। **'शतक्रता'** वह सैंकड़ों घर के कार्य करने वाली हो। नारी का कर्त्तव्य है कि वह घर सम्भाले, उसे शुद्ध और साफ रखे। अग्निहोत्र करने वाली हो, शुद्ध भोजन बनाने वाली हो। यजुर्वेद के अनुसार नारी वैद्य के समान हो, विद्वानों का आदर करने वाली हो और ऋग्वेद ने कहा है कि नारी उषा के समान दिव्य गुणों वाली हो।

आगे मन्त्र में कहा है कि **''यथा गृहपत्नी असः''** इन्हीं गुणों से तू गृहपत्नी है अन्यथा नहीं। तथा **''सविता ते आयुः दीर्घम् कृणोतु''** अर्थात् तीनों लोकों को रचने वाले ईश्वर तेरी आयु को लम्बा करें। तू चिरंजीवी हो। जब तक बीते युगों में वेदविद्या जीवित थी तब तक नारियाँ इन महान मन्त्रों से प्रेरित हुई, पति तथा पिता, दोनों कुलों का आनन्द, यश—कीर्ति बढ़ाती थीं। वे भीष्म, अभिमन्यु आदि महान सन्तानों को जन्म देने वाली होती थीं। अथवा वेदज्ञान से पूर्ण जनक की आचार्या बाल ब्रह्मचारिणी गार्गी के समान विश्व को विद्या दान देने वाली होती थीं। भारत भूमि को पुन: वेद विद्या एवं वेदोक्त शुभ कर्म को जानने एवं आचरण में लाने वाली विदुषी नारियों की आवश्यकता है। VIV

Mutual Tolerance is necessary to live peacefully

Sapna

Mutual tolerance is a necessity for all time and for all races
- Mahatma Gandhi.

Tolerance is a very important quality that forms the basis of any society. ***Tolerance is a virtue that makes humans really human.*** This quality is needed for peaceful existence and harmonious life. More so, now when the world has shrunk because of technological advancement and the interactions between people are also happening virtually (courtesy internet).

People from different countries, backgrounds, ideals, faiths, political inclinations and affiliations are working together and staying together. So, ***tolerance is a trait that is required to make a cohesive society.***

People should show ***cultural tolerance*** where there are people of different cultural backgrounds. We must respect the culture of others irrespective of caste, class, or creed.

However, even though people are mature enough to understand and respect others' culture, thoughts, ideas, food habits, ideologies, religious views, we find most of us still observe lack of tolerance regarding these.

Frowning upon others ***attire,*** for instance is very common example of intolerance that one sees all around. We will not get into a debate on gender here by talking about how women are treated in our society by what they choose to wear. But in general, it is common to find youngsters and older adults to mock if someone is not dressed as per their ideas. Even children today are not unaffected by this malaise because they imbibe the qualities of their parents and their elders.

Food is another example where intolerance and stentorian behaviour have been seen. In fact, sometimes people are making issues of nonissues

and creating a mess by clear lack of tolerance.

If you don't like something please don't do it, but don't become intolerant to the other person's choice if it is not affecting you directly or indirectly. If you don't like a movie or a television program, please don't watch it because you have a choice. But most people will resort to criticising and aggression.

India is a country that has been known for tolerance and pluralism. Our scriptures and traditional wisdom have been exhorting for a peaceful and tolerant existence. But it is really sad that even in 21st century, we are sticking to such actions that should have been discarded.

Tolerance is going out of fashion can be seen by how people are not tolerating each other's political views. People are abusing each other in the name of their country, which is pathetic.

Religion has long been a serious bone of contention world over. It is disheartening to see even educated and elite showing lack of tolerance towards others' religions. Technologically we are making advances but mentally we are going to Stone Age.

It is imperative that people accept every person of society as their own. A society can only be termed perfect and tolerant if we are tolerant to any kind of culture whether it is a Hindu culture in a Muslim society or a Muslim culture in a Hindu society. The world will become a lovely, peaceful place where every individual will be happy and there will be no misery if we all adopt a tolerant attitude towards all.

Further insight by the Editor

Really, Sapna beti has raised a sensible and relevant subject ***"Tolerance".*** So, a person if becomes able to maintain tolerance, it means he has become able to realize God. You see, our mind collects the worldly information from five senses i.e. eyes, ears, nose, tongue and skin and deeply thinks over it. Then it decides what action is to be taken. ***Due to lack of vidya, mostly mind is not able to take perfect, feasible and benevolent decisions.*** Duly indulged in illusion, Ravann could not tolerate when nose of

his sister Shoorpanakha was cut which resulted in destruction of Lanka kingdom. Dhritrashtra could not tolerate when Pandu was chosen as monarch. It resulted in Mahabharat war where no soldier from both sides were left alive except five warriors of Pandavas along with Sri Krishna Maharaj and three warriors of Kauravas. What bloody war took place due to non-tolerance.

Nowadays also due to ignorance of Vedas, pride, greed and anger are at their peak. So, fight outbreaks in trivial matters because mostly the people donot tolerate other's anger; duly indulged in illusion.

We will have to think deeply that God has created the universe and therefore He has advised remedy in Vedas only, for number of problems.

So, remedy of human-beings is of no use. For example- U.N.O has been created by several countries to stop the wars but wars could not be stopped and in future also U.N.O would be unable to do the same. ***Now, let us pay our attention towards the remedy made by God. In all four Vedas, God has preached to control five senses, mind and intellect. The way to control the same is to obey Vedas, do daily agnihotra and hard practice of Ashtang Yog philosophy, which enables the aspirant to control his five senses, mind and intellect.*** Then question would never arise of not maintaining tolerance. Sri Krishna Maharaj, Sri Ram and several other dignitaries of previous yugas followed Vedas, enabling Sri Ram to give one year time to Ravanna to return Mata Sita. What an amazing tolerance was shown by Sri Ram.

Similarly, Shishupal used to abuse Sri Krishna Maharaj. Sri Krishna Maharaj did not care. Instead, he told Shishupal that he would pardon him hundred times for abusing Sri Krishna Maharaj after which he would kill him. So, being the philosopher of Vedas and Ashtang Yog philosophy Sri Krishna Maharaj tolerated hundred abuses of Shishupal.

In view of the above, if people start listening to Vedas and practising Ashtang Yog, it would control automatically five senses, mind, intellect of aspirant resulting in maintenance of peace.

VIV

सत्संग का प्रभाव

ऋचा कौशिक
इंजीनियर *(बी.टैक.)*

चारों वेद एवं छः शास्त्रों इत्यादि धर्मग्रन्थों में सत्संग के विषय में गहन–गम्भीर ज्ञान दिया गया है। सत्संग के बिना कोई भी अपने दु:खों का अन्त नहीं कर सकता और ना ही जन्म–मृत्यु का यह प्रकृति–चक्र समाप्त हो सकता है। तुलसी दास जी इस विषय में कह गए हैं–

''एक घड़ी आधी घड़ी, आधी से पुनि आध,
तुलसी संगत साधु की, कटै कोटि अपराध।''

ऋग्वेद मन्त्र 2/21/6 का भी यही भाव है कि कोई भी नर–नारी सत्संग के बिना पूर्ण विद्या और उत्तम बुद्धि प्राप्त नहीं कर सकते और इस प्रकार उत्तम बुद्धि और पूर्ण विद्या के बिना सुख–शांति एवं धन पाने के योग्य नहीं होते।

ज्ञान देने के लिए विद्वान् जन कई प्रकार की कथाएँ सुनाते हैं जिससे सरलता से ज्ञान समझ आ जाता है। ऐसी ही एक कथा है कि एक बार डाकुओं के गिरोह ने देवी माता का मन्दिर लूटने का विचार किया। डाकुओं का नियम था कि कहीं सत्संग हो रहा हो तो दोनों कानों को अपनी उँगली से बन्द कर लिया जाए। ऐसा ही हुआ कि जब रात्रि में वहा डाकुओं का गिरोह माता का मन्दिर

लूटने जा रहा था तो मार्ग में कोई विद्वान् सत्संग दे रहा था। जैसे ही किसी संदर्भ में उस विद्वान् ने ज्ञान की बात कहनी शुरु की तो एक डाकू, जिसने दोनों कानों में उँगली दे रखी थी, उसके पाँव में काँटा लग गया। डाकू ने काँटा निकालने के लिए कान से एक उँगली निकाली और हाथ से काँटा निकाल दिया। परन्तु जितनी देर काँटा निकालने में लगी, उतने समय में डाकू के कान में यह ज्ञान की बात पड़ गई (जो वह विद्वान् सुना रहा था) कि भूतों की परछाई नहीं होती। समय बढ़ता रहा और सब डाकुओं ने मिलकर माता के एक मन्दिर को घेर लिया और हथियारों के बल पर वहाँ का सब सोना कब्ज़े में लि लिया। इतने में उन गाँव वालों के बीच में माता के मन्दिर में जो बैठे हुए थे, उनमें से एक श्रद्धालु उठा और ज़ोर–ज़ोर से बोला मैं भूत हूँ – मैं भूत हूँ, इत्यादि। डाकू डर गए क्योंकि डाकुओं में तो अन्ध–विश्वास था कि भूत होते हैं। उन्होंने डर के मारे, सब लूटा हुआ सामान वापिस कर दिया। इतने में, उस डाकू ने, जिसके पैर में काँटा लगा था, देखा कि जो पुरुष यह कहकर चिल्ला रहा है– ''मैं भूत हूँ–मैं भूत हूँ''; उसकी तो परछाई ज़मीन पर पड़ रही थी। डाकू ने पुनः अपनी पास पड़ी एक छड़ी उठाई और उससे उस पुरुष को पीटने लगा, जो कह रहा था कि वह भूत है। वह पुरुष चिल्लाया कि वह भूत नहीं है– वह भूत नहीं है। तब तो सारे डाकू ही मिल गए और उसे पीटने लगे। गाँव वालों ने भी डाकुओं को पुनः सारा माल वापिस लौटा दिया।

उस डाकू ने, जिसके पैर में काँटा लगा था, विचार किया कि मैंने सिर्फ इतना सा सत्संग सुना था कि भूतों की परछाई नहीं होती और मैं पुलिस से भी बच गया एवं गाँव वालों की मार–पीट से भी बच गया। यदि मैं सदा सत्संग सुनता रहूंगा तो मुझमें असीम विद्या आ जाएगी और मेरा उद्धार भी हो जाएगा। अतः मैं आज से क्यों ना सत्संग ही सुनूँ और यह डकैति आदि का दुष्कर्म करना छोड़ दूँ।

संपादक के विचार

सत्पुरुष का संग ही सत्संग कहलाता है। अतः मनुष्यों को चाहिए कि जो कुसंग में समय व्यर्थ करने वाले मूर्ख लोग हैं, उनका संग त्याग कर और वेद एवं अष्टाँग योग विद्या के ज्ञाता विद्वानों का संग करके, संसार में ऐश्वर्य का संग्रह करके, सदा ही

आनन्दयुक्त जीवन व्यतीत करें। चारों वेदों–शास्त्रों एवं धर्मग्रन्थों ने जीवन का यही लक्ष्य रण है कि विद्वानों का संग (सत्संग) करके, सत्य का उपदेश प्राप्त करते हुए तथा गृहस्थाश्रम के शुभ कर्म करते हुए ईश्वर को प्राप्त करें। सत्संग को शब्दों द्वारा कई प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है। जैसे–

1. ***सत्य का संग सत्संग है।***
2. ***श्रत्+धा इति श्रद्धा अर्थात् सत्य पर धारणा करना सत्संग कहलाता है।***
3. ***वेदाध्ययन भी सत्संग कहलाता है, इत्यादि परन्तु इन सबके बीच में जो एक शब्द विशेष है, वह ''सत्य'' है।***

सत्य का अर्थ है कि जिसे कभी प्रारम्भ नहीं किया जा सकता, जो जन्म–मरण से परे है, भूत, वर्तमान एवं भविष्यकाल का द्रष्टा है, स्वयंभू है अर्थात् ना तो उसे किसी ने बनाया ना उससे आगे कोई पदार्थ बन सकता है, इत्यादि अनन्त गुण धारण करने वाला जो एक तत्त्व है, उसे सत्य कहते हैं और उस सत्य को ही परमेश्वर कहते हैं। संक्षेप में यूँ कह सकते हैं कि वेद ज्ञाता, विद्वानों का संग करना और उनसे इस सत्य परमेश्वर को जानना ही सत्संग है। इस विषय में ***ऋग्वेद मन्त्र 10/129/2*** कहता है कि इस सृष्टि के बनने से पहले ना कोई जन्म था ना कोई मृत्यु थी क्योंकि प्राणियों का अस्तित्व ही नहीं था, अभी सृष्टि से पूर्व प्रलयकाल चल रहा होता है। प्रलयकाल में सृष्टि रचना नहीं होती तो उस समय कुछ भी नहीं होता। हाँ, एक तत्त्व जिसे जीवन धारण करने के लिए अन्न–जल–वायु इत्यादि अन्य किसी भी तत्त्व की आवश्यकता नहीं होती किन्तु स्वयं की धारणा शक्ति से (स्वयंभू) स्वतत्ता रुप जीवन धारण करता हुआ एक जीता जागता ब्रह्म था और ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ और न था। ***इस ब्रह्म को ही ''सत्य'' कहते हैं।*** विद्वानों के संग द्वारा इस ब्रह्म को ही प्राप्त किया जाता है। अत: ब्रह्म का संग ही सत्संग कहलाता है और ब्रह्म का संग वेद के ज्ञाता विद्वान् के बिना प्राप्त नहीं होता। अत: परमेश्वर ने भी ऋग्वेद आदि में विद्वानों के संग को परमेश्वर का संग (सत्संग) कहा है ***यजुर्वेद मंत्र 18/29*** में भी ईश्वर ने ज्ञान दिया है कि मनुष्य वेद ज्ञाता, धार्मिक विद्वानों के संग (सत्संग) से, यज्ञ के लिए सब समर्पित करके मोक्ष प्राप्त करें। जीवन का केवल यही लक्ष्य है कि हम जिज्ञासु बनकर वेद ज्ञाता, विद्वानों की सेवा करके और उनसे प्रार्थना करके, पूर्ण विद्याओं को प्राप्त करके, मोक्ष प्राप्त करें। अत: ***ऋग्वेद मंत्र 1/147/3*** का भाव है कि जैसे आँखों वाले किसी अंधे को कुँए में गिरने से बचा लेते हैं वैसे ही विद्या चक्षु वाले विद्वान् जन हैं, वो मनुष्य को अविद्या और अधर्म के आचरण से बचाते हैं, उनका पितरों के समान सत्कार करें। VIV

Vedas & Women

It is not a thunderous air in the sky,
That respect of women cannot be saved,
Such should be the punishment to the culprit,
Neither should live, nor die they.

Swami Ram Swarup 'Yogacharya'

Vedas throw light on both worldly and spiritual matters. As regards worldly matters, a king should rule over a country to protect the people and to enable them to spend a long, happy life without any fear. Secondly, in Vedic spiritualism, if we pray to God to protect us then He surely awards protection to the aspirant ***(Samved mantra 1458 refers).***

However, due to lack of Vedic knowledge, public is far away from worldly as well as spiritual protection.

By law, Rulers are required to maintain an atmosphere of fear amongst criminals-rapists.

But due to our bad luck, at present laws and the rulers have failed completely to maintain their fear amongst criminals due to which, the rape cases are increasing day by day. Therefore, at this juncture, law and ruler, both are of no use.

Yajurved emphasis that not law alone but the fear of rulers who strictly implement the law should always be experienced in the heart of criminals.

Yajurved and Atharvaved strictly state that- if the public is debarred from getting justice then the King and his government are directly held responsible for the same and are declared sinners.

Until the rulers Impose murderous, destructive violence on the sinners including unchaste immoral sinners, then rape cases, dacoity, thefts and other sinful acts can't be destroyed from roots, say Vedas.

Moreover, Atharvaved even stresses that such sinners should be beheaded. Infact law and order are non-alive and cannot act on the sinner themselves therefore, the sinners mostly

are not afraid of law and order. On the other hand, rulers who impose the law and order on criminals are alive persons, so if the rulers impose law and order strictly and mercilessly on the sinners then the fear can be maintained amongst them and sinful acts can be destroyed from its roots. ***In this regard, I would like to quote a real story from Rajasthan, told by my Respected Guruji*** that once the King of Rajasthan had a tour in public to know about their well-being. He stayed in a village.

Before the gathering of the people, Raja asked if anyone had any complaint, in return, a young man with folded hands told the King that a lady had killed his relative and she was habitual to threaten him daily, stating that no one had power to cause damage/harm to her.

The King immediately asked his soldiers to catch hold of lady and hang her on the branch of the tree and she was hanged. In this way, the man was given justice and the people got a lesson not to violate laws.

Due to the failure of law and order and the rulers who impose the same to control such crimes, the criminals have been encouraged to violate the honour and respect of women time and again. It's a bitter truth according to our true literature like ***Valmiki Ramayan*** and ***Mahabharat*** that today's adverse state of all our country-women, could not have occurred, had there been strong and effective law and order enforced by leaders as was done by ancient kings, who used to follow Vedic culture, wherein no scope to excuse/forgive the culprit existed.

Our leaders must realize that according to Vedic culture it is imperative for the rulers to ensure mental and physical security of their public. Infact, Vedas direct the kings (political leaders) to treat and nurse the public as their own children.

When the leaders will deal with public with such feelings of oneness, then surely, they will be sensitive towards public's difficulties and problems.

VEDIC PUNISHMENT STARTS ABOVE THE AGE OF THREE YEARS

It is the law of land, made by the

Government that juvenile offenders must not be punished severely but should be sent to reformatory homes instead of jails. It is very clear that the said views are advocated by human-beings. Now, we must know as to what does God say in this context in Vedas; wherein ***Atharvaved mantras 10/5/15-21*** preach us to maintain celibacy, to get the knowledge so as to discharge our duties faithfully/honestly and to get long, happy life.

God preaches in ***Atharvaved mantra 10/5/22*** that the punishment for such lustful offences, starts just after crossing the age of three years (that is, for the offenders who are characterless and fail to maintain celibacy.)

Unity wields divine strength. Hence, to counter and control the heinous crime of rape, each one of us shall have to unite to face the culprits bravely and simultaneously awaken the government so that the said serious problem is not ignored by the administrators as before.

It shall not be out of place to mention here that if public is made learned of Vedas then only will they acquire ability to control their senses and remain away from vices like sensuality, anger etc VIV

सेवा

शीतल गुप्ता

सेवा शब्द जितना छोटा दिखने में और लिखने में है उतना ही इसका अर्थ गहन–गम्भीर है। मैं इसका अर्थ कभी भी न समझ पाती अगर ***पूजनीय आचार्य स्वामी राम स्वरूप जी*** से नहीं मिलती। आज के युग में सच्चे योगी का मिलना बहुत कठिन है। शायद पिछले जन्मों में कई अच्छे कर्म किए होंगे जो कि इस जन्म में ईश्वर ने गुरु जी के दर्शन करवाए, हम उनसे मिले और मैं उनकी शिष्या बनी। किसी सच्चे योगी को समझना सरल बात नहीं है। जब भी मुझसे कोई अच्छा कार्य हो जाता है, तो ईश्वर का धन्यवाद करती हूँ कि गुरुजी से मिल गए जिनकी शिक्षा से अच्छा कार्य हुआ अन्यथा मैं–मैं, मैंने किया, मेरा–मेरा में ही जीवन निकल जाता। ***हमारा कोई सामर्थ्य नहीं है कि हम किसी की सेवा कर सकें, यह तो गुरु जी का ज्ञान ही है जो हमें सेवा की प्रेरणा देता है लेकिन फिर भी हम अपनी आत्मा की आवाज़ को नहीं सुनते।*** अधिकतर सब कुछ अपनी सुविधानुसार ही करते हैं। गुरु जी ने हमें बच्चों की तरह समझाया और स्नेह दिया। गुरु जी हर बात वेदों से ही करते हैं। उनकी हर एक बात वैदिक ज्ञान से शुरु होती है और वैदिक ज्ञान पर ही खत्म होती है। मैं तो कुछ ही लिखने का प्रयास कर रही हूँ, जहाँ गलती हो, ईश्वर से, गुरु जी से क्षमा चाहूँगी।

सेवा तीन प्रकार की होती है– 1. तन 2. मन
3. धन; देवपूजा, संगतिकरण, दान भी सेवा हैं, यदि शुद्ध हृदय से अपने आचार्य की करें।

तन की सेवाः– तन की सेवा का अर्थ है अपना आलस्य त्यागकर, अपनी सुविधा छोड़कर, अपना अहंकार–क्रोध, दिखावा छोड़कर करें। हमारे चेहरे पर कभी भी सेवा की शिकन नहीं आनी चाहिए। अगर हम सेवा मुँह बनाकर करते हैं, ज़ोर–ज़ोर से बोलकर करते हैं, सेवा करके सबको किसी न किसी बहाने सुनाते हैं, सेवा करके अहंकारी हो जाते हैं, सेवा सुनकर झट से झुंझला जाते हैं, क्रोध आने लगता है– तब हमें अपनी आत्मा और मन को समझाना चाहिए कि हम सेवा के नाम पर अपने आप को ठग रहे हैं। जिस तरह बच्चा गलत सवाल करके सोचता है कि मैं तो पढ़ रहा हूँ। लेकिन गलत सवाल करके बच्चा कभी भी कक्षा में उत्तीर्ण नहीं हो सकता, उसी प्रकार हम भी दिखावे वाली सेवा से कभी भी जीवन में उत्तीर्ण

नहीं हो सकते।

हम सबको अब अपने आप से प्रश्न करना चाहिए कि हम कैसी सेवा करते हैं? अपने आचार्य से ही पता चला कि बड़े–बुजुर्गों की सेवा कैसे करनी चाहिए। आजकल लोग सेवा तो करते हैं परन्तु देखा गया है कि बुजुर्ग डरने लगे हैं बच्चों से। गुरु जी ने बताया कि बड़ों को अपने मुख से कुछ भी गलत मत कहो।

हमें अधिक से अधिक सेवा से सम्बंधित वैदिक ज्ञान अपने आचार्य से सुनकर आचरण में लाने का अभ्यास करना चाहिए जब तक सेवा हमें नम्रता नहीं सिखाती और सेवा हमें मीठी नहीं लगती। गुरु जी कहते हैं–

सेवक वही जो करे सेविकाई

मन की सेवा– मन की सेवा का अर्थ है कि हमारा पूर्ण समर्पण होना चाहिए। ऐसा भी नहीं हो कि मन में कुछ और जुबाँ में कुछ और। ***गुरु जी अक्सर कहते हैं कि ''क्या ठिकाना उनकी बात का, दिल में कुछ और जुबाँ पे कुछ।''*** सेवा दिखावे के लिए नहीं, फायदे के लिए नहीं। सेवा मन और आत्मा से होनी चाहिए। अपने गुरु महाराज जी की सेवा में प्राण देने में भी पीछे नहीं हटना चाहिए। गुरु जी कहते हैं मनुष्य सेवा से भी तर सकता है, बहुत उदाहरण देकर भी बताते हैं कि कोई सिर्फ गाय की सेवा करके तर गया, कोई आज्ञा का पालन करने से तर गया। ***धन की सेवा***–

1. अपने सामर्थ्य के अनुसार।
2. अगर धन है तो कंजूसी नहीं।
3. दिन में दान दो तो सूर्य को पता न चले, यदि रात में दो तो चंद्रमा को पता न चले।
4. सेवा का व्याख्यान नहीं करना।
5. सेवा देकर अहंकार नहीं।
6. सेवा अन्न, धन, वस्त्र, रत्न, सभी की करनी चाहिए।
7. सेवा करते समय हमारे व्यवहार में नम्रता होनी चाहिए और सब कुछ ईश्वर ने हमें दिया है,

यह हमेशा याद रखना चाहिए। अक्सर लोगों में ''मैं–मैंने किया'' की भावना आ जाती है।

8. यज्ञ में सेवा करनी चाहिए, यजमान बनना चाहिए।
9. शिक्षा देने में, कन्या की शादी में, कोई बीमार हो तो हमें धन से उसकी मदद करनी चाहिए।
10. आचार्य, माता–पिता की सेवा तन, मन, धन से नि:स्वार्थ भाव से करनी चाहिए।

हमें सबकुछ ईश्वर ने दिया है, ईश्वर की आज्ञा मानना भी उसकी सेवा है। ईश्वर ने कहा है कि वैदिक ज्ञान को जीवन में अपनाओ। हम कर्म लेकर आए हैं और कर्म लेकर जाएँगे। इसलिए छोटा–बड़ा, मेरा–तेरा, अपना–पराया अहंकार छोड़कर नि:स्वार्थ भाव से सेवा करें।

संपादक के विचार

भज् धातु से सेवा शब्द निष्पन्न होता है। सेवा बचपन में परिवार से ही प्रारम्भ होती है। जैसे– श्रीराम बचपन से ही माता–पिता, अतिथि एवं परम गुरु, वेदों के ज्ञाता, परोपकारी, यथार्थ वक्ता, संयमी एवं अनेक गुणों को धारण करने वाले गुरु वसिष्ठ जी की सेवा करके परमेश्वर के समान स्वरूप वाले होकर आज भी संसार में पूजनीय हैं। माता–पिता, अतिथि की सेवा भी गुरु भक्ति–सेवा द्वारा ही ज्ञात होती है। इस विषय में ***ऋग्वेद मन्त्र 5/18/1*** का उपदेश है कि जो अग्नि के समान पवित्र, आत्म रहस्य को जानने वाला, सत्य का उपदेशक, वेदों का ज्ञाता, विद्वान् है, जो सबका हित चाहता है, यथार्थ वक्ता है, ऐसे विद्वान् का सत्कार एवं उसकी सेवा करके मनुष्य भवसागर से तर जाता है। विद्वान् की सेवा के विषय में ***ऋग्वेद मन्त्र 5/53/12*** स्पष्ट करता है कि साधारण मनुष्य यदि तथा–कथित गुरु कहलाने लगे परन्तु मनु–स्मृति के अनुसार भी उसके पास वेद विद्या का ज्ञान, संयम, परोपकार की भावना, निष्पक्षता आदि अनेक वैदिक गुण, वैदिक साधना द्वारा प्राप्त नहीं है तो ऐसे तथा–कथित गुरुओं की प्रशंसा एवं सेवा नहीं की जा सकती। वेद मन्त्र कहता है कि यदि वेद विद्या आदि अनेक उत्तम गुणों पर आचरण नहीं है और यदि कोई मनुष्य विद्या आदि उत्तम गुणों का मनुष्य जाति को दान नहीं कर सकता, वैदिक शिक्षा नहीं दे सकता तो उसकी प्रशंसा एवं सेवा नहीं की जा सकती।

सेवा के विषय में स्पष्ट है कि यह बचपन से वेद के ज्ञाता, गुरु की वैदिक

शिक्षा द्वारा ही संस्कारों में आती है। इसलिए वेदज्ञ गुरु/आचार्य परम पूजनीय कहा है। जैसे कि ***तैत्तिरीयोपनिषद् वल्ली 1, अनुवाक 11*** में उपदेश है कि ***माता*** जन्म देती हैं, वह देवी हैं, उसकी सेवा करो, ***पिता*** पुरुषार्थ करके धन कमाता है, बच्चों का पालन–पोषण करता है वह भी देव है, उसकी सेवा करो, ***आचार्य*** जीव को वेद विद्या दान करके भवसागर से पार करते हैं, वे माता–पिता, अतिथि, इन सबसे भी बड़े एवं पूजनीय देव है, उनकी सेवा करो। ***अतिथि,*** जो कम से कम एक वेद का ज्ञाता है, उसकी सेवा करके वेद का ज्ञान लो। जो श्रेष्ठ विद्वान्, वेदों के ज्ञाता, सयंमी मिलें, उनकी सेवा करनी चाहिए। ***श्रद्धापूर्वक अधिकारी को दान देना चाहिए।*** गृहस्थाश्रम में प्रत्येक नर–नारी को श्रद्धानुसार आचार्य को प्रिय धन लाकर सेवा में देना चाहिए। यह गहन ज्ञान का विषय है, इसे वेदों से ही समझने का प्रयास करो कि जहाँ वेदों में उपदेश है कि ईश्वर भक्ति के बिना सुख नहीं वहीं ***ऋग्वेद मन्त्र 1/46/12 एवं 1/71/3,4*** में भी स्पष्ट किया है कि विद्वानों के बिना सुख नहीं एवं विद्वानों से वेद विद्या सुने बिना नारी एवं पुरुष को सुख प्राप्त नहीं हो सकता। अत: वेदों ने यहाँ तक कहा है कि जिज्ञासु प्रयत्न करे कि वह विद्वानों का दिन–रात संग करके उनकी सेवा करे एवं वेद विद्या प्राप्त करें।

ऋग्वेद मन्त्र 10/67/2 का भाव हृदय में रखें जिसमें कहा कि सृष्टि में वेद ज्ञाता परम ऋषि ही वेद का उपदेश करते हैं, अन्य कोई नहीं। तथा ऐसे परम ऋषि/ब्रह्मा से वेद सुनने वालों को ईश्वर प्राप्ति निश्चित है।

गहन विचार करें तो ज्ञात होगा कि यज्ञ कर्म करने से सृष्टि के सम्पूर्ण प्राणियों को सुख मिलता है, उनकी आयु बढ़ती है और अनेक लाभ प्राप्त होते हैं जो भौतिक पदार्थों से प्राप्त नहीं हो सकते। अत: ***ऋग्वेद मन्त्र 10/15/5*** में ईश्वर ने आज्ञा दी है कि मनुष्य वैदिक विद्वानों को यज्ञ में बुलाएँ तथा यज्ञ करवाएँ। यह करने से प्रत्येक प्रकार की सेवा का ज्ञान मनुष्य को प्राप्त हो जाता है।

CORONARY HEART Disease

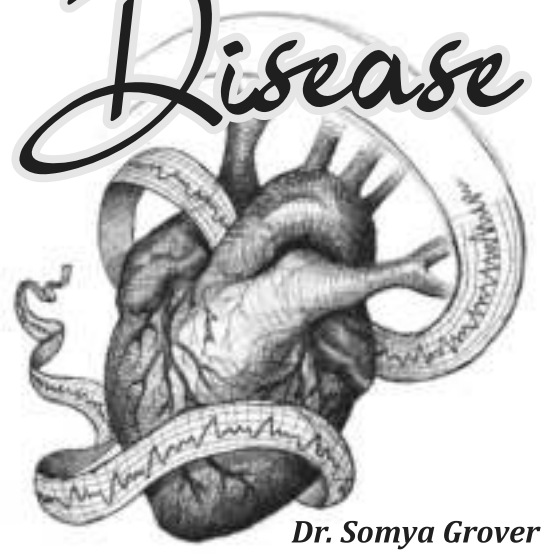

Dr. Somya Grover

Cardiovascular diseases (CVD) comprise of a group of diseases of the heart and the vascular system; amongst them one of the leading cause of death globally is Coronary Heart disease. An estimated 17.5 million people died from CVD (representing 31% of all global deaths), 7.4 million were due to Coronary heart disease. Compared with all other countries. India suffers the highest loss in potentially productive years of life (i.e. 35-64 years) due to deaths from CVD.

CORONARY HEART DISEASE also called as ISCHAEMIC HEART DISEASE is defined as impairment of heart function due to inadequate blood flow to the heart compared to its needs, caused by obstructive changes in the coronary circulation (blood circulation to the heart).

CHD is modern "epidemic"; may manifest itself as-

a) Angina pectoris of effort.
b) Myocardial infarction
c) Irregularities of the heart
d) Cardiac failure
e) Sudden death

RISK FACTORS- They can be divided into

Not Modifiable

Age- Risk with increasing age

Sex- Male or Female (according to hormonal changes)

Family History

Genetics

Personality (Type A- anxious, competitive impatient people).

Modifiable

1) **Smoking-** The degree of risk of developing CHD is directly related to the number of cigarettes smoked per day.

Carbon monoxide induced thermogenesis; nicotine stimulation leading to increase in both blood pressure and oxygen demand of heart are the probable cause.

However, the risk declines quite substantially within one year of stopping smoking and gets nullified after 10-20 years.

2) **Hypertension-** It is the single most useful test for identifying individuals with increased risk. It accelerates the atherosclerotic process especially if lipid profile of patient is deranged (disturbed).

3) **Cholesterol-** There is a triangular

relationship between cholesterol level, habitual diet and CHD. Low fat diets, low cholesterol leads to low risk of CHD and vice versa. HDL is protective against development of CHD

HDL should be>40mg/dl.

Whereas LDL< VLDL are lead cholesterol and hence should be in low level.

Total cholesterol level should be below 200mg/dl in adults.

4) **Diabetes-** Increase the risk of CHD by 2-3 times. Leading to early death.

5) **Genetic factors-** Family history increase the risk of premature death in CHD>

6) **Physical activity-** Sedentary life-style is associated with a greater risk of development of early CHD. Therefore, exercise increases the concentration of HDL and decreases both body weight and blood pressure which is beneficial for health.

7) **Alcohol Intake-** High alcohol intake (i.e. 75 g or more per day) can lead to CHD, Hypertension and all CVD.

Prevention of CHD

1) **Dietary Changes-** It is the principal preventive strategy in prevention of CHD.

- Reduction of fat intake to 20-30% of total intake
- Consumption of saturated fats to be reduced to less than 10% of total intake
- Decrease dietary cholesterol
- Increase intake of complex carbohydrates i.e. vegetables, fruits, whole grains, legumes)
- Avoidance of alcohol consumption

Reduction of salt intake to 5gm daily or less.

2) Avoid Smoking

3) Blood pressure control by limiting alcohol consumption, reduced salt intake and promote physical activity and weight control.

4) Physical activity

Symptoms of Heart Attack

- Pain or discomfort in the centre of the chest
- Pain or discomfort in the arms, the left shoulder, elbows, jaw or back.
- Difficulty in breathing
- Nausea/vomiting
- Feeling light-headed or faint
- Cold sweating
- Becoming pale

It is important to identify people with risk factors and make correct diagnosis if a person presents with such symptoms and rush to hospital within "Golden period" so as to reverse the process and save one's life.

Whereas, always remember

"Prevention is better than Cure".

VIV

धनुरासन

स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'

आज कल योग–विद्या को कई नामों से पुकारा जा रहा है परन्तु वेद से उत्पन्न इस विद्या का प्रमाणिक व सनातन नाम अष्टांग योग–विद्या है। जिसके यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि ये आठ अंग हैं। पाँच यम और पाँच नियम जब तक सिद्ध नहीं होते तब तक आसन प्राणायाम इत्यादि लगाने का कोई भी आध्यात्मिक लाभ नहीं होता। हमारा प्रयत्न रहेगा कि प्रत्येक पत्रिका में धीरे–धीरे वेदों में वर्णित ऋषियों व मुनियों द्वारा अपनाई इस विद्या के सनातन एवं शाश्वत स्वरूप पर प्रकाश डाला जाएगा। यहां ***धनुरासन*** के विधि–लाभ का वर्णन किया जा रहा है। यह धनुष के आकार वाला धनुरासन कहलाता है।

विधि–

- पेट के बल लेट जाएँ। दोनों एड़ियों को मिलाकर घुटनों को दोहरा करके टांगों को घुमाकर पीठ की ओर ले जाएँ।
- दोनों हाथों से पैर के टखनों को मजबूती से पकड़ लें।
- एड़ियाँ और पंजे मिले रहें और पाँवों के पंजों को घुटनों की ओर झुकाएँ।
- इस प्रकार पाँव के तलवे चौड़े होकर आकाश की ओर जाएँगे।
- पाँव को पीछे की ओर धकेलिए और पाँव हाथों को पीछे की ओर खींचे जिससे सीना और सिर सांप के फण की तरह ऊपर उठ जाए।
- हाथों से पाँवों को आगे की ओर खींचे, ऐसा करते समय कोहनियों में खम न आए।
- इस आसन में घुटने जमीन से ऊपर उठ जाएँ। घुटने ऊपर उठने पर जांघों को भी पूरी तरह ऊपर उठा देना और पूरा बोझ नाभि के निचले हिस्से पर आ जाए।
- धनुरासन आधे से एक मिनट अथवा सुविधा अनुसार लगाए। 3 से 4 बार लगा सकते है।
- धनुरासन प्रात: और सांय दोनो समय किया जा सकता है।

लाभ –

- नित्य अभ्यास से शरीर के प्रत्येक अंग और जोड़ में से व्यर्थ का द्रव्य निकल जाता है।
- रीढ़ की हड्डी और कमर दर्द में लाभकारी है।
- पेट के भी रोगों में लाभ होता है।
- टांगों, पिण्डलियों और एड़ियों का दर्द ठीक हो जाता है।
- यह आसन थकावट को भी दूर करता है।

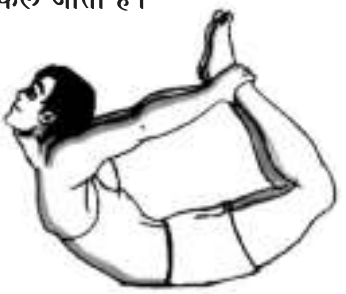

Correspondence between Swami Ram Swarup 'Yogacharya' & Late S. Khushwant Singh Ji

(Continued)

(on the subject of Atheism & Casteism etc.)

Original Letter

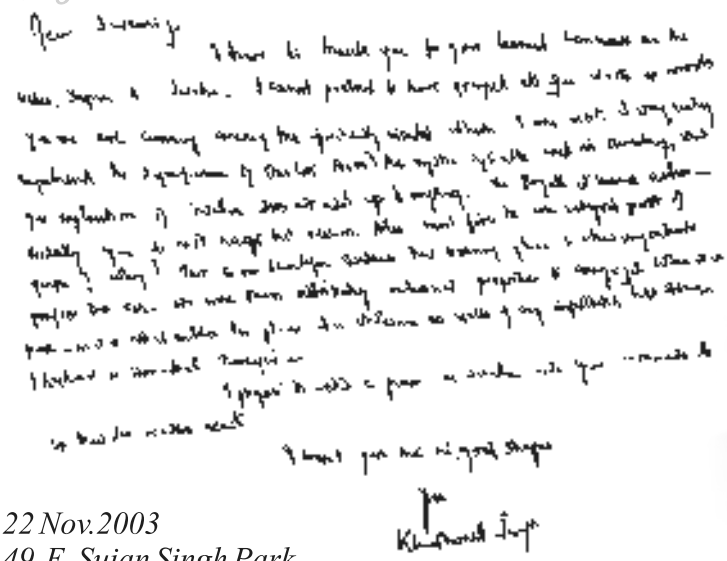

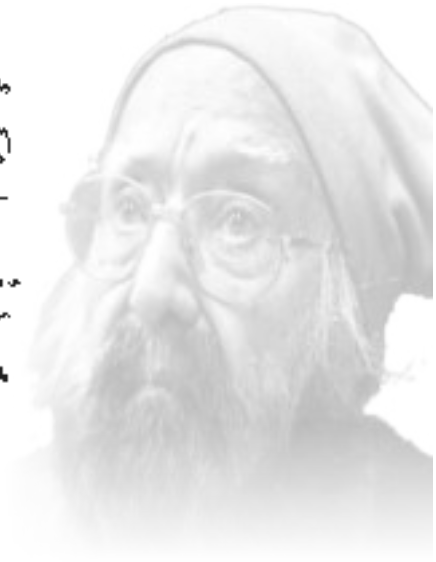

22 Nov.2003
49-E, Sujan Singh Park,
New Delhi-110003.

Dear Swamiji,

I have to thank you for your learned comments on Vedas, Yajna and Swaha. I cannot pretend to have grasped all you write as words you use are common among the spiritually minded which I am not. I vaguely comprehend the significance of Om or Aum, the mystic…….. used in ………, but your explanation of Swaha does not add up to anything.

In Punjabi it means ashes. ……. You donot accept that version. Also must……….. an integral part of yoga? Why? There is scientific evidence that burning ghee……… purifies the air. No more than attributing properties to…………

I trust you are in good shape.

Your's……..

Sh. Khushwant Singhji,
E-49, Sujan Singh Park,
New Delhi-10003

Dated-1st December, 2003.
Respected Shri Khushwant Singhji,

Namaste,

I hope this letter finds you in the best of your health. I am heartly thankful to your excellency for expressing your valuable heart feelings and straight forward views and hope that your excellency will be showering such kind of valuable views in future too.

Suddenly, a sher emanates from mind and the same is presented in your holy feet-

"Dua Salaam Hi Bahut Badi Baat Hai,
Muhabbat Ka Yahi To Aagaz Hai,
Zindagi Ke Safar Mein Tum Khoob Mile Ho Sarup,
Uljhan Se hokar Guzar Jaana, Yeh Bahut Badi Baat Hai."

I listened news about Amitabh Bachchan, about his serious operation which he went through, though he did not comprehend this surgery. He only had faith on surgeon/surgery. It does not mean that one should accept anyone's views about spiritualism. I too have never gone to any temple, mosque, church or any religious place but for sometime, I joined some saints which I found altogether fraud. Then I searched a yogi in dense jungle of Rishikesh and started practice of Ashtang Yoga, i.e. not only asan, prannayaam which have been made professional by present saints but learnt totally eight fold paths of Ashtang Yoga under guidance of the saint. After some years, I realized eternal knowledge of Vedas within my heart, not taught by anybody else and not in dream even but in awakened state. Before this miracle, I never listened Vedas. Then I started study of Vedas, duly advised by the voice of my inner guide i.e. God.

First I believed in Fraudulent saints which gave me knowledge of illusion, 420 etc. then I believed in true saint, i.e. Yogi of Rishikesh, who is not alive at present. So, at last, not to worship God but to know the reality or illusion, one will have to make faith on said both type of saints and it is one's own hardest deed to locate truth within them and then within soul like the case of Amitabh Bachchan etc.etc. So, I and the ancient saints only concentrated their faith on Vedas and realized truth. Actually, "Swaha" does not mean ashes in Sanskrit language. Swaha word is from eternal knowledge of Vedas or one can say from Sanskrit language.

I also use several times the Punjabi word "Swaha" in the sense of ashes as I had to stay for some years in Amritsar, at Putlighar, while in service, in the army (M.E.S.) and

thus knew the Punjabi language but when any person starts using "Swaha" word from Vedas then its meaning is eternal truth etc., being difference in languages. For example-when I was in Indonesia, where they use the word "susu" which means milk but in Hindi Language, "Susu" means "Urine". So all languages are respected according to their own literature, please.

In Sanskrit dictionary, its meaning is an "aahuti" of haven Samigri and ghee etc. i.e. an offering to God in Yagya but this meaning is not divine being man-made. The real meaning is in Vedas.

In Yajurved mantra 38/6, it meaning is true conduct". In Mantra 38/7, the word "Swaha" has been mentioned six times and its meaning is "eternal, immortal/true voice". The whole mantra says that by uttering swaha i.e. by true chanting of Swaha and by true deeds and thus by offering aahutis from mantras into burning fire of Havan Kund, air and water are purified in the atmosphere.

In Yajurved mantra 17/57, it is advised that Haven samigri offered in the burning fire must be a mixture of four types of Jadi-Bootty (herbs) i.e.

1.) Antibiotics to cure diseases (Gyol Herb etc)
2.) Fragrant herbs like Guggal herb, cardamoms, saffron, dried rose petals, sandalwood etc.
3.) Sweet materials like jiggery etc.
4.) Nutritive materials like ghee, jau, mash dal, til, dry fruits etc.

Mantra furthers clarifies that the deeds to offer such Samigri is true and the best effect of this mixture spreads in the atmosphere, purifying air, water etc.

Several mantras of all four Vedas say that these special herbs impart the special qualities which they have like fragrance, nutrition, antibiotics etc., in the atmosphere offered in burning pious fire through the process of diffusion. To understand the mechanism we may consider certain common examples like the smell of chaunk (seasoning, frying) of chillies in kitchen spreads to adjoining rooms like drawing room etc. Similarly, the smell of burning wire in the insulation too can be detected even at a distance. The stink of burning piece of meat is also detected in the same manner as in above quoted cases. It is all based on the principal on which the fire works. Fire has a unique property to disintegrate the materials into finer and yet smaller particles which then diffuse readily in the air and the beneficial effect of these materials spreads in the atmosphere. When the water gets into contact with these pure materials, even water is purified.

To elaborate further, one may consider other common examples like whenever the bathroom stinks, we usually use naphthalene balls to remove the stink. To overcome the smell of sweat, people, mostly use deodorants etc. to kill the bacteria, phenyl is used on floor and phenyl is made from mango tree. So, the offerings made in fire, purifying air and water in the same manner.

In this connection, Yajurved mantra 1/2 says-

"Vasoho Pavitrumasi Dyuasi Prithvyasi Matarishvano
Gharmoasi Vishwadha asi,
Parmenn Dhamna Dhringhasva Maa Hvarma Te Yajyapatihvarsheet."
i.e. O learned man! Never give up this pious deeds of yagya which purifies all, it spreads through air and purifies air as well. In the mantra, the air that circulates in space is referred to as "Maatrishva". Further the mantra says that this deed of Yagya imparts all goodness and comforts to its performer.

However, as compare to past, there is far less frequency of performance of yagya so the beneficial effects of yagya have also become negligible, pollution being beyond calculation. So, the main meaning of the word "Swaha" mentioned in Vedas and in Upnishads is true vanni and true action. Your respectable views are also true that the said meaning will be accepted only by those who are spiritual minded but I will also request here to kindly pay your attention on Fench scientist "Tri" who experimented on the smoke generated from Havan. He stated that generally twigs of mango tree are used in performing havan, which liberate "Formic aldehyde" gas which in turn kills the germs and purifies the air and water. It was experimentation made on havan which facilitated the scientists to come up with "Formalin" a germicide which is used frequently in households as disinfectant.

Further, the scientist "Tautlik" proved that use of reisins like kishmish, munakka in the offerings made in fire generates smoke which eliminates germs of typhoid. Use of Jaggery etc. is deadly on germs of Tuberculosis, plaque, small pox etc. I remember that when plaque was spread once in Mumbai, then people of Mumbai started doing havan, which I read in newspaper.

Further, Dr. Kundanlal, M.D. who was an allopathic doctor, did a unique experiment on the smoke of yagya. He took 12 glass test-tubes which were thoroughly sterilized and were divided into six sets each set comprising of two test-tubes. Six different types of eatables including milk were filled in six different sets. Now, pure smoke of Havan was filled in six test-tubes and other six test-tubes were filled with fresh garden air. The observation was made that the food kept in test-tubes filled with fresh garden air decayed earlier than the food kept in test-tubes filled with pure smoke of Yagya.

So above experiments of the scientists are based on ved mantras and also are according to the above said Yajurved mantra 38/7, wherein purification from haven is told.

Either in Hindustan or Navbharat times of Hindi of Delhi, I once read and was even glad to read that 2,3 countries (I think, it is a matter of more than 25 years back so I cannot recollect exactly the name of countries, but certainly USA and Chilli is there) these countries have made it a rule and have placed four huge havan-kunds, at the corner of their country border and they only threw Haven Samigri in the burning fire, without any spiritual point of view, only to purify air.

Based on my experience and the experience of the past Rishis, the ved mantras emanate direct from God and still originate in the heart of a Tapasvi, that is why Kapil Muni in Sankhya Shastra Sutra 5/48 states that ved vanni is that which is originated suddenly in the heart of Tapasvi without his desire. Why without his desire? Because fundamentally the result of Tapasya is to originate automatically the ved vanni in the heart of a Tapasvi/Yogi and it is eternal rule.

It clarifies that Vedas are also eternal and true like God, so every word of Vedas is true i.e. immortal and eternal/Formless like God. So, swaha word which means truth and a true deed, is used at the end of each offering with ved mantras only, which indicates that the offering of Ved mantra is true and will give true effect and secondly the offerings offered by the devotee is a true deed i.e. the devotees action is true and the result in the shape of pious one has become true i.e. ever-lasting for the devotee, i.e. why, Swaha word is used at the end of each mantra. Ghee does not purify air, but the above said havan samigri does the needful. Ghee is full of energy and when it disintegrates into minute particles, when offered in fire, it rises up in the sky along with the smoke of havan. There it freezes in sub zero temperature and facilitates to shower rain also.

In the plains as well as in the hills, sun purifies water by the process of evaporation.

I am nowadays also busy in writing second part of Yogshastra which has now been completed but proof-reading is in progress. This proof-reading comes from Delhi. I usually send all the letters to your Excellency through the gentlemen who comes from Delhi every week. The second book as to "What Vedas say about Cow" is also in progress in writing.

I am eagerly waiting for your precious article on "Swaha" please.

I wish you a long, happy life with good health to enable you to shower your wisdom to all concerned.

Thanking you,

Your's sincerely,

Swami Ram Swarup 'Yogacharya'
Ved Mandir, Tikka lehsar,
Yol Bazaar, Yol Camp,
District Kangra, H.P.

गुरु-शिष्य संवाद

स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'

ग्रीष्म ऋतु का आगमन है। वेदों में ईश्वर का उपदेश है कि पृथिवी पर सब ऋतुओं में वेदानुसार सदा शुभ कर्तव्य–कर्म करके सुखमय दीर्घायु को प्राप्त करें। प्रत्येक ऋतु में यज्ञ, नाम–जाप और योगाभ्यास आदि द्वारा ईश्वर की उपासना करते रहना मनुष्य का परम कर्तव्य कहा है। वातावरण में गर्मी पैदा करने वाली ग्रीष्म ऋतु में भी गृहस्थ के शुभ कार्य करते हुए हम सदा वैदिक साधना द्वारा अपने शरीर और आत्मा में बल को बढ़ाकर सुन्दर भविष्य का निर्माण करें। इस ऋतु में गुरुकुल के विद्यार्थी अपने ब्रह्मचर्य बल के द्वारा तपा देने वाली गर्मी के प्रभाव से सदा दूर होते हुए प्रसन्न मुद्रा में विद्या लाभ एवं प्रश्नोत्तरी के लिए अपने आचार्य की प्रतीक्षा में बैठे हुए हैं।

कुछ ही समय में आचार्य ने कक्षा में प्रवेश किया और विद्यार्थियों ने उठकर अपने आचार्य का अभिनन्दन किया। आचार्य की आज्ञा पाकर सब विद्यार्थी पुनः अपने–अपने स्थान पर बैठ गए। आचार्य ने अपना स्थान ग्रहण करने के पश्चात् ***अथर्ववेद मंत्र 4/1/3*** की व्याख्या करते हुए कहा कि– हे विद्यार्थियों! जो वेद का ज्ञान सुनकर, प्राप्त करके और आचरण में लाकर ज्ञानी बनता है, वह परमेश्वर का मित्र होता है। उस ज्ञानी के हृदय में परमेश्वर सदा प्रकट रहता है। ऐसा ज्ञानी अपने जीवन को दिव्य गुणों से परिपूर्ण कर लेता है। वह शब्द ब्रह्म वेद से ही ईश्वर की प्रार्थना, स्तुति एवं उपासना करता है।

आचार्य ने विद्यार्थियों को आशीर्वाद देते हुए कहा कि आप वेद विद्या को ग्रहण करके स्वयं का, परिवार, समाज, देश एवं मानवता का उपकार करके अपने सुन्दर भविष्य का निर्माण कर रहे हो। सदा याद रखो कि ईश्वर आपका मित्र बनकर प्रतिक्षण

सहायक है। ऐसी प्रतिक्षण की सहायता विश्व में कोई भी और कभी भी नहीं दे सकता। क्योंकि मनुष्य की शक्ति अल्प–सीमित है। जबकि सर्वव्यापक ईश्वर की शक्ति कण–कण में है और असीमित एवं अनन्त है। इसलिए वेद विद्या के द्वारा सदा ईश्वर से जुड़े रहो और इस प्रकार ईश्वर को अपना मित्र समझो।

आप जो वेदाध्ययन कर रहे हो उस अध्ययन की परीक्षा लेने के लिए मैं आपसे कुछ प्रश्न करता हूँ।

आचार्य– ऋचा बेटी, बताओ ईश्वर का साक्षात्कार कहाँ किया जाता है?

ऋचा– हे आचार्य! ऋग्वेद में कहा– ''ऋषीणाम् क्षये वा'' वह ईश्वर ऋषियों/विद्वानों के निवास स्थान में और (गिरा चकृषे) वेदवाणी की स्तुति द्वारा (गुहा वा) बुद्धि में भी साक्षात् किया जाता है। परमात्मा ऋषियों के हृदय और बुद्धि में स्तुति द्वारा प्रकट होता है। आज भी यदि कोई श्रीराम, माता सीता और पिछले युगों के महापुरुषों की तरह वेद–मन्त्रों से परमात्मा की स्तुति, विद्वानों की शरण में जाकर करता है तो वह परमेश्वर उस साधक के अन्दर मित्र के समान स्नेही बनकर और वैदिक प्रेरणा देने वाला बनकर प्रकट होता है। अत: ईश्वर प्राप्ति के लिए हमें विद्वानों का संग करना चाहिए।

आचार्य– बहुत अच्छा बेटी! अब बताओ ईश्वर के दिव्य गुण, कर्म एवं शक्ति के विषय में किस स्थान पर सुना जाता है?

ऋचा– हे आचार्य! ***ऋग्वेद मंत्र 10/71/3, 6/15/7, 1/128/8*** में परमेश्वर ने यह ज्ञान दिया है–

1. ऋषियों द्वारा ही वेदवाणी में वर्णित परमेश्वर का प्रचार होता है।
2. मनुष्य सत्य के प्रकाशक विद्वानों से वेद विद्या की याचना करे और वेद विद्या प्राप्त करके दूसरों को दे।
3. विद्वान् लोगों ने जिन ऋषि–मुनि, योगियों की सेवा करके विद्या प्राप्त की है, मनुष्य भी केवल ऐसे ही विद्वानों की सेवा करके विद्या प्राप्त करें।

अत: हे आचार्य! वेदों में वर्णित ईश्वर के दिव्य ज्ञान, कर्म और स्वभाव को तो मन्त्र–दृष्टा ऋषियों के स्थान पर जाकर ही सुना जा सकता है क्योंकि वेदमंत्रों सहित ईश्वर उनके हृदय में प्रकट रहता है।

आचार्य– अति सुन्दर कहा बेटी! हे सोमेन्द्र अब आप बताओ कि कौन श्रेष्ठ मनुष्य होते हैं?

सोमेन्द्र– हे आचार्य! वही श्रेष्ठ मनुष्य कहलाते हैं जो जीवन में सदा यज्ञरूप आदि श्रेष्ठ कर्म करते हैं।

आचार्य– बहुत अच्छा, बेटा! अब बताओ कि प्राणी को सुखों का भोग किस प्रकार प्राप्त होता है?

सोमेन्द्र– हे आचार्य! अनन्त नामों में ईश्वर का नाम– ''स्व'' भी है जिसका अर्थ सुखस्वरूप कहा गया है। ईश्वर में अनन्त सुख हैं इसलिए ऋग्वेद कहता है कि ईश्वर की भक्ति के बिना सुख नहीं और वह भक्ति ईश्वर का ज्ञान प्राप्त किए बिना और उसकी स्तुति, उपासना आदि किए बिना कदापि सम्भव नहीं। अतः मनुष्यों में परस्पर मित्रता, विद्या दान और परोपकार से ही सुख प्राप्त हो सकता है।

आचार्य– बहुत अच्छा बेटा। हे आमेन्द्र अब आप बताओ कि किस मनुष्य का विश्वास नहीं करना चाहिए?

ओमेन्द्र– हे आचार्य! ***ऋग्वेद मंत्र 1/41/9*** में कहा जो मनुष्य मारने, शाप देने, विष आदि देने और अन्याय से दूसरों के पदार्थों को हरने वाले हैं, ऐसे चार प्रकार के मनुष्यों का विश्वास कभी न करें। इनसे नित्य डरें और ऐसे दुष्ट कर्म अथवा दुष्ट वचन कहने वाले मनुष्यों का न कभी संग करें और न इनको मित्र बनाने की इच्छा करें।

आचार्य– शाबाश, बेटा ओमेन्द्र! अब बताओ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की नाभि कहाँ हैं?

ओमन्द्र– हे आचार्य! अथर्ववेद में कहा कि यह यज्ञ ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की नाभि है– केन्द्र है। क्योंकि यज्ञ ही सबका पालन कर रहा है। मनुष्य की नाभि के डगमगाने से सम्पूर्ण शरीर रोगी हो जाता है। इसी प्रकार ***यज्ञ, जो समस्त ब्रह्माण्ड की नाभि है***– केन्द्र है, यदि यही डगमगा जाए अर्थात् विश्व में यज्ञ ही समाप्त हो जाएँ तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के अस्तित्व को खतरा हो जाएगा। ***ऋग्वेद मंत्र 1/13/2*** में कहा यज्ञ वायु आदि पदार्थों को शुद्ध करता है तथा शरीर और औषधी आदि पदार्थों की रक्षा करके अनेक प्रकार के रसों को उत्पन्न करता है तथा उन शुद्ध पदार्थों के भोग से प्राणियों के विद्या, ज्ञान और बल में वृद्धि होती है। विश्व में यज्ञ की आई कमी के कारण ही प्राणियों में विद्या, ज्ञान, बल और शुद्ध बुद्धि का अभाव प्रत्यक्ष दिख रहा है।

सामवेद मंत्र 1036 कहता है कि

यज्ञ से तीनों लोकों को सुख प्राप्त होता है। वेद कह रहे हैं कि यज्ञ करने से रक्षा होती है और यज्ञ करने वाले का कभी नाश नहीं होगा तथा यज्ञ में अत्यन्त सुख है एवं यज्ञ से ही ईश्वर की प्राप्ति होती है। तभी तो यज्ञ को सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की नाभि कहा है।

आचार्य– अति उत्तम बेटा। बताओ शब्द ब्रह्म किसको कहते हैं?

आमेन्द्र– शब्द ब्रह्म वेद मन्त्रों को कहते हैं।

आचार्य– बताओ परब्रह्म किसको कहते हैं?

आमेन्द्र :– परब्रह्म सृष्टि रचयिता, पालन एवं संहारकर्ता, सर्वव्यापक, निराकार परमेश्वर को कहते हैं। हे आचार्य! महाभारत ग्रन्थ के शांति–पर्व में भीष्म पितामह युधिष्ठिर को समझा रहें हैं कि हे युधिष्ठिर! ब्रह्म के दो रूप समझने चाहिए। पहला शब्द ब्रह्म अर्थात् वेद और दूसरा परब्रह्म अर्थात् निराकार परमेश्वर तथा हे युधिष्ठिर! जो मनुष्य शब्द ब्रह्म में पारंगत है वह परब्रह्म को प्राप्त कर लेता है। हे आचार्य! स्पष्ट है कि जो वेद विद्या को नहीं जानता, वह परमेश्वर को न तो जानता है और न उसको प्राप्त कर सकता है।

आचार्य– हे प्रिय विद्यार्थियों! आपके वेदानुकूल उत्तर सुनकर मैं प्रसन्न हुआ। हमारे देश में इसी तरह यदि बेटे–बेटियाँ पाठशाला, विद्यालयों आदि की पढ़ाई के साथ–साथ वेद विद्या को भी अपना लें तब भारतवर्ष ही नहीं, अपितु भारतवर्ष सम्पूर्ण विश्व में भाईचारे, सुख शांति और वर्तमान की भ्रष्टाचार, हिंसा, नारी–अपमान, रोग आदि समस्त समस्याओं का नाश करके स्थायी शांति स्थापित कर देगा।

Satsang & Ashrams

Seema Dogra

In today's hectic modern Indian Hindu family lives, we see women taking mostly initiatives to worship God or go out for attending Satsang or Spiritual discourses. ***Ever wondered, in modern society, why generally women folk are the seekers of God!*** Generally women are the first one in the family to drive this urgency of finding the almighty. Few men you would find around you talking about Satsang or going to Spiritual holy places. This is very unique situation.

If we dig deeply, this regular visits to ashrams and listening to spiritual gurus sermons, is seen as a habit which has been developed gradually mostly by women. This has two folds to look at – firstly, worshipping God in most of the Hindu households is the prime responsibility of women of the house. The men and boys just do little bit as a duty. They are busy winning the bread for family! Women are expected to do fasts for men and their well-being. They are expected to follow all family traditions related to God, spirituality and other superstitions. May be this enforced responsibility make women inadvertently more closer to God and they prefer performing its rituals. Secondly, it seems the habit of going to ashrams regularly can be seen as a routine of life, since mostly women of our Hindu society who are from lower, middle class or rural section, are not free to go out of their houses for their recreational activities (pleasures), albeit going out of house to a spiritual place is easy and allowed! So in order to go away for a while from the household chaos, headaches or personal problems, seeking the asylum in Satsang/holy places is the best possible opportunity available. They don't miss it!

But these holy places/ashrams are really not meant for entertainment. These ashrams are not the reference points for women to meet and greet their weekly friends and exchange their complaints about each other. Some even show off their dresses and jwellery. (Materialism). ***The ashram is a place of spirituality, peace and inner joy, a place of spiritual work for all.*** Therefore, one should

cultivate and maintain the atmosphere of holiness, harmony, understanding, unity, selflessness and service. Every person who goes to ashram is expected to be responsible in behavior, avoid criticism, gossiping, arrival in unsuitable clothing or arrival at inappropriate times in middle of Yajna.

The clothes in which you go to the ashrams should encourage a spiritual atmosphere around you. The recommended dress codes should be followed both by women and men. It should be clearly understood that it is the clothing through which you show discipline respect to the ashram, to yourself and everyone around you. So the essence of going to Satsang needs to be understood clearly.

Ideally, women can do wonders if they follow the teachings of their deities and guide their children, men at home to do same for a peaceful and happy lives, taking the benefit of the role and situations.

Not only women it's the responsibility of the men as well to seek for spirituality. In our Hindu Vedas every human has to live life according to four ashramas of life. If both men and women follow the path together, they will definitely attain the ultimate happiness.

Sitting in Satsang means sitting in front of your Guru who embodies all spiritual enlightenments. It represents the meeting with the highest truth and with an enlightened Guru. Just a glimpse of your Guru makes you a lucky one! One should go to Satsang with this zeal only for Guru and his discourse. To imbibe all preaching and teachings in one's life not to vile away time.

The ashrams should be considered as rare holy places where one can spend time in seeking truth about God! Someone said in a spiritual writing that the company of a Guru is very difficult to obtain. There is no blessing in the world equal to that of meeting your Guru and that is a real Satsang. Literally the meaning of Satsang is - "sat" means truth and "sang" means to be with or associated with. Hence, ***Satsang is friendship or association with truth itself. Satsang is over and above our lives materialistic aspirations.***

We should not set the example of going to Satsang is a habit or ritual of our life styles, rather it's a mandate to be at peace with ourselves. We have to rise above our selfishness to get closer to the ultimate truth of embracing God's existence! Satsang and ashrams are the best avenues for divine company in which we nurture our spirituality and devotion!

Further insight by the Editor

Yes, Seema beti has pointed out the fact that in the present scenario most of the women have interest in the present worship and satsangs. Though men are also interested but the number of women worshippers is more.

God preaches Himself in Vedas that until an aspirant follows the teachings of Vedas, under the guidance

of learned Acharya of Vedas, he cannot get peace, cannot destroy sorrows and cannot attain salvation etc.

Secondly, ***Rishi Patanjali*** in his ***Yog Shastra Sutra 1/7*** and ***Gautam Rishi*** in his ***Nyaye Shastra Sutra 1/40*** teach the public that to reach at truth if views of anybody do not tally with ved mantras, those views will be treated as unauthentic/false and thus truth cannot be attained. So, self-made views are not accepted by God and learned of Vedas.

For example- If a person worships Ghost then he will have to produce ved mantra as its evidence. But, I may tell you that there is no mantra in Vedas supporting Ghost worship. Therefore, ghost worship is automatically declared as unauthentic and false.

Due to ignorance, the present so-called gurus have made understanding in the public that to attend their (unauthentic) satsang is the best way to please God. They also give hundreds of assurances to the public.

I think that psychologically also, the public accepts their views. Also, public has made up their mind that if they attend more and more of satsangs (whether their satsang relate to vedas or not, or they tell their self-made stories based on materialism) delievered by so-called gurus, their wishes would be fulfilled, sorrows would destroy and they would attain salvation. That is why, public accordingly obeys them under the influence of their assurance because unfortunately innocent pubic does not even know Vedas and therefore the meaning of the word ***"Satsang".*** So, here I would like to mention ***Yajurved mantra 18/29*** as an authentic explanation of the word "Satsang". Mantra states- ***"Svaha Devaha Aganma"*** i.e., by making contact with learned of vedas, we destroy sorrows and attain salvation. According to ***Shatpath Brahmin Granth Shloka 3/7/6/10,*** the meaning of word "Devaha" is learned of vedas and Yog Philosophy.

Regarding obtaining of traditional knowledge (Vidya) we will have to pay our attention towards previous vedic yugas, where Brahma (learned of four Vedas) used to preach different types of moral duties and spiritual knowledge from Vedas in a Yajyen. Such preach is called Vidya. ***(Rigved mantra 10/71/11 refers).***

Therefore it is fundamental law of vedas made by God that until and unless we remain in shelter of learned acharya of vedas and follow vedas' preach we cannot destroy our sorrows, cannot fulfil our wishes and can never attain salvation.

Therefore both men and women, would be able to perform authentic worship of God if they listen to unchangeable, eternal and everlasting knowledge of vedas, which emanates directly from God and not from any human-being. Otherwise, we are bound to perform self-made worship, which is not eternal and everlasting and does not

emanate from God, say Vedas and Shastras.

In our motherland, India, respected Mata Sita, Madalsa, Gargi who was acharya of King Janak, Katyayini and so many other millions of women were called Vidushis i.e., learned of vedas and they did well for family, society and nation. But to our bad luck, nowadays very few women and daughters are learned of Vedas. ***Rigved mantra 8/33/19 clearly states- "Stree Hee Brahma Babhoovitha"***

Brahma is learned of vedas. i.e., woman has been called Brahma in Vedas.

So, meaning of Satsang, according to four Vedas is to make contact with Satya. But the meaning of satya, as also quoted by Sri Krishna Maharaj in his ***Bhagwad Geeta Shloka 2/16*** is that the matter which is eternal and everlasting i.e., which never ceases to exist, remains always is called Satya otherwise destructible. According to vedas, there are only four Satya:-

(1) Souls
(2) God
(3) Prakriti
(4) Knowledge of four vedas, which emanate directly from God.

Knower of the said subject is learned of vedas and Yog Philosophy, who can only be a Yogi, Rishi, Muni etc.

Therefore man or woman who makes contact with learned Acharya of vedas and Yog Philosophy, he/she infact attends satsang and not others; say Vedas. So, in the present scenario, every man or woman will have to think over/consider/ discuss over the real meaning of satsang.

Again, we will have to know about the real meaning of Rishi, Muni, Yogi, Tapasvi etc. In this connection, ***Atharvaved Mantra 4/30/3*** states that the title of Yogi, Rishi-Muni and Brahman is awarded by God Himself, when a person after following Vedas and doing hard practice of Ashtang Yog Philosophy attains Samadhi and thus he realizes God by following vedic preach. He is called Brahma, he is authorized by God to deliever satsang on vedas and about God (whose description is mentioned in vedas by God Himself and not by men). How can we deny the above quoted authentic ved mantras, telling the real meaning of Satsang, soul and prakriti and also about other unlimited matters mentioned in vedas.

As Seema beti stated that ashrams are not meant for gossiping etc., so these can't be avoided until we follow vedic path. In this connection, we will have to draw our attention towards ***Rigved Mantra 1/164/39*** wherein it is stated that if a person listens to Veads but does not realize God by following Vedas' preach, then mere listening of Vedas will be of no use and such person starts gossiping etc.

Seema beti has mentioned about Guru, she very well knows that Guru means Vedic Guru. Therefore her feelings are related to Guru who knows four vedas, Ashtang Yog Philosophy and has attained Samadhi.

VIV

विद्वानों के संग से होने लगी अपने आप से पहचान

अंजना दीवान (इन्डोनेशिया)

''बुल्लेया की जाणाँ मैं कौन'' बुल्लेशाह की यह वाणी बोलने में तो बहुत सरल लगती है लेकिन इन शब्दों में छिपे रहस्य को कोई बिरला ही जानता है। आज संसार की चमक–दमक में हम ऐसे मग्न हो गए हैं कि ''मैं कौन हूँ'' इस रहस्य को जान पाना बहुत ही मुश्किल है। मनुष्य जन्म पाकर, यह बहुत ज़रूरी है कि हमें अपने अस्तित्व की पहचान हो। पहचान हो भी तो कैसे, जब स्वयं हमने अपने शत्रु मोह–माया, काम–क्रोध, अहंकार, राग–द्वेष, लोभ आदि को अपना सगा मित्र बना लिया है और इनको जीते बिना कोई भी मनुष्य अपने–आप को जान ही नहीं सकता है।

अब प्रश्न यह है कि कौन हमारे मन के अन्दर छिपे इन शत्रुओं से हमारी पहचान कराए?इसके लिए सामवेद मन्त्र–२ में कहा– त्वम् अग्ने..... देवेभिर्मानुषे जने'' अर्थात् विद्वानों की शरण में जाओ, ईश्वर कह रहा है तथा यह विद्वान् जन मनुष्यों के कल्याण के लिए ही हैं। परन्तु कौन से विद्वानों की शरण में? ***यजुर्वेद मन्त्र 40/10*** में कहा–

''इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।''

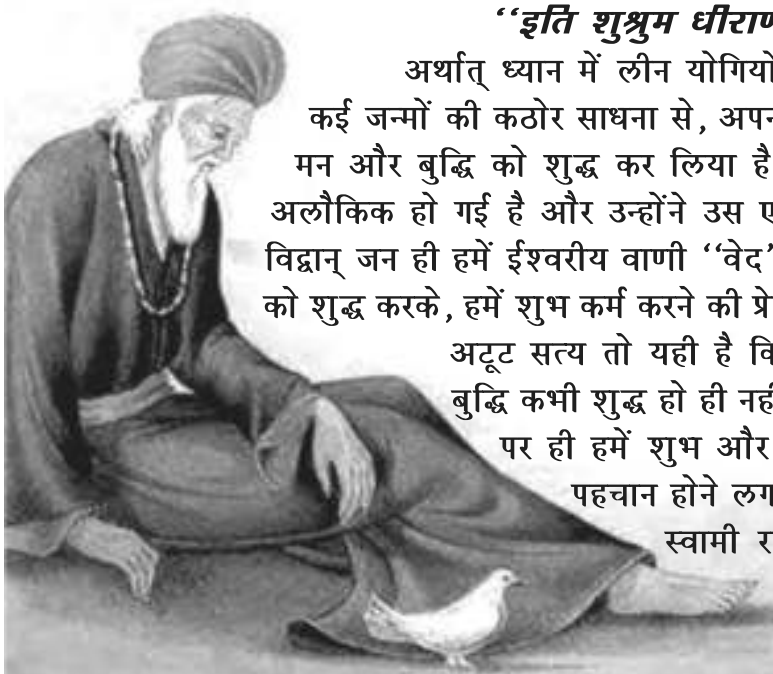

अर्थात् ध्यान में लीन योगियों की शरण में जाओ जिन्होंने अपने कई जन्मों की कठोर साधना से, अपनी इन्द्रियों को संयम में करके, अपने मन और बुद्धि को शुद्ध कर लिया है अर्थात् कठोर तप से जिनकी बुद्धि अलौकिक हो गई है और उन्होंने उस एक तत्त्व ''ईश्वर को जान लिया, वे विद्वान् जन ही हमें ईश्वरीय वाणी ''वेद'' से ज्ञान देकर, हमारे मन और बुद्धि को शुद्ध करके, हमें शुभ कर्म करने की प्रेरणा दें।

अटूट सत्य तो यही है कि विद्वानों के संग के बिना मन और बुद्धि कभी शुद्ध हो ही नहीं सकते। मन और बुद्धि के शुद्ध होने पर ही हमें शुभ और अशुभ, सत्य और असत्य कर्म की पहचान होने लगती है। उसके लिए हम अपने आचार्य स्वामी रामस्वरूप जी के चरणों में बारम्बार नत मस्तक हैं। उन्हीं के संग से हमने जाना कि यह चंचल मन तो

प्रकृति के ***तीन गुणों–रजो, तमो, सतो गुण*** से बना है इसलिए यह सदा संसार चक्र में ही पड़ा रहता है। आचार्य के साथ बार–बार यज्ञ करने और वैदिक शिक्षा/ज्ञान सुनने पर यह बात समझ में आने लगी कि यह मन और बुद्धि सिर्फ ईश्वर के नाम स्मरण और वैदिक साधना से ही शुद्ध हो सकते हैं।

धीरे–धीरे जब यह वैदिक शिक्षा आचरण में आने लगी तो यह समझ में आने लगा कि हमारा सबसे बड़ा शत्रु है– हमारी 'मैं', हमारी 'ईगो', जो अक्सर हमें शुभ कर्म करने से विमुख कर देती है। प्राय: हम वही कर्म करते हैं जिससे हमारी 'मैं' ऊपर रहती है या सन्तुष्ट होती है। कभी धन का अहम्, कभी अमीरी का, सम्पत्ति का, जवानी का, दान का, सेवा का इत्यादि। और इसी अहम् के कारण ही हम बात–बात पर गुस्सा करते हैं। इसी कारण प्राय: हम अपने से छोटे–बड़ों का लिहाज़ किए बिना, जो जुबाँ पर आता है, उनको बोल देते हैं तथा अगर कोई हमें हमारी गलती पर डाँटता या समझाता है, ''इंस्लट तो फील होती ही है'' और साथ ही उसके प्रति मन में कड़वाहट और भर जाती है। क्रोध ही मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है तथा अपने आचार्य के साथ यज्ञ में बैठकर हमने यह जाना कि क्रोधी मनुष्य को अपने शत्रु बनाने की आवश्यकता नहीं है, ***उसका क्रोध ही उसका सबसे बड़ा शत्रु है*** और अपने इसी क्रोध के कारण ही सारे संसार को वह अपना शत्रु बना लेता है। सारा संसार बहुत बड़ा है परन्तु क्रोध उससे भी बड़ा है, यह क्रोध भी भिन्न–भिन्न प्रकार का है। जिसका क्रोध वश में है समझो उसने सारे संसार को जीत लिया है। आचार्य से यह भी जाना कि हमारी 'इगो' ही हमारे क्रोध का कारण है और बिना वैदिक साधना तथा तपस्या के, इस पर विजय पाना नामुमकिन है। आचार्य के संग से यह भी बोध होने लगा कि मनुष्य का ***दूसरा बड़ा शत्रु उसका लोभ तथा मोह हैं।*** आज संसार में जितने भी पाप कर्म हम देखते हैं, वे प्राय: मोह और लोभ में आकर ही हम करते हैं–कभी परिवार का मोह, कभी संतान का, सुन्दरता का, जायदाद का, धन–सम्पत्ति का, इत्यादि। इसी लोभ और मोह के कारण ही ना जाने कितनी बार हम झूठ को सच, गलत को सही बताकर ही वस्तुओं को हड़प कर उनका मालिक बनने की चेष्टा करते हैं। यही कारण है कि पुत्र मोह और राजगद्दी के लोभ में राजा

धृतराष्ट्र ने अपनी सब संतानों और राज्य को खो दिया था। रावण और कंस के सर्वनाश का कारण भी उनका लोभ ही था। आज संसार में लोभ इतना बड़ गया है कि सब को मैं और मेरा–मेरा ही है, प्यार और हमदर्दी तो नाम मात्र की है। प्यार है तो सिर्फ धन से और हमदर्दी है तो धनवान् से। ऐसा लगता है कि हम सब अपना स्वार्थ निकालने में ही लगे हैं। आचार्य से यज्ञ में वैदिक शिक्षा सुनकर यह समझ में आने लगा कि आज हम आलसी हो रहे हैं, मेहनत और पुरुषार्थ से जी चुरा रहे हैं, अपने बल और बुद्धि पर अधिक भरोसा करने लगे हैं और सबसे अधिक ईश्वर के बनाए हुए नियमों का उल्लंघन कर रहे हैं। यही कारण है कि हम लोभी और लालची होते जा रहे हैं।

तीसरा बड़ा शत्रु हमें लगने लगा–***मन का विषय–विकारों में लिप्त होना है*** और आचार्य की वैदिक शिक्षा से यह समझ में आने लगा कि यह सब ब्रह्मचर्य की कमी के कारण ही है। दोस्तों के साथ हँसी–मज़ाक, गाना– बजाना, क्लब–पार्टियों में जाना, ताश खेलना, जुआ–शराब इत्यादि, जितने भी संसार के यह विषय–विकार देखने में लुभावने लगते हैं परन्तु ज़हरीले साँप से कहीं कम नहीं हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि मानवता को दानवता की ओर ही यह सब अग्रसर करते हैं।

संपादक के विचार

अनन्त विद्याओं का भण्डार, ईश्वर से उत्पन्न चारों वेद ही हैं। यह सौभाग्य केवल मनुष्य जाति को है कि वे वेद के ज्ञाता, विद्वान् के आश्रय में रहकर, वेद विद्या को प्राप्त करके, कर्म–बन्धन से छूटकर मोक्ष का सुख प्राप्त करें।

बुल्लेशाह ने भी ***यजुर्वेद मन्त्र 7/29*** का ही भाव प्रकट करते हुए कहा कि ''की जाणाँ मैं कौन'' अर्थात् मैं कौन हूँ, मैं नहीं जानता। वस्तुत: वह गुरु कृपा से सबकुछ जान गए थे कि वह शरीर नहीं, चेतन जीवात्मा हैं। फिर भी जनता को ज्ञान देने के लिए उन्होंने अपनी कविता का मुखड़ा यही लिखा कि– ***''कीं जाणाँ मैं कौन''।*** ऊपर कहे यजुर्वेद मन्त्र में यही प्रश्न है कि हे मनुष्य! (क: असि) तू कौन है (कस्य असि) किसका है और (क: नामा असि) तेरा नाम क्या है?

वस्तुत: प्रत्येक मनुष्य का जन्म इन्हीं प्रश्नों का उत्तर लेने के लिए हुआ है। वेद विद्या के अभाव में मनुष्य अविद्याग्रस्त होकर जड़ को चेतन और चेतन को जड़ मान बैठता है। वह समझता है कि वह प्रकृति रचित जड़ शरीर है। परन्तु कटु सत्य है कि वह जड़ शरीर में निवास करने वाला शुद्ध, चेतन, अजर–अविनाशी जीवात्मा है।

परमेश्वर के गुण अनन्त हैं। उन

अनन्त दिव्य गुणों में, यह दो गुण भी यजुर्वेद ने कहें हैं– ***''शुद्धम् अपापविद्धम्''*** अर्थात् परमेश्वर शुद्ध है, उसे कोई गन्दगी छू नहीं सकती और पाप कर्म से भी परे हैं। मनुष्य को अपना स्वरूप जानने के लिए कि वह जीवात्मा है, उसे वेद मार्ग पर चलकर यज्ञ–अग्निहोत्र, कठोर योगाभ्यास आदि ईश्वर की पूजा करके ईश्वर की तरह ही काम–क्रोध, मद, लोभ, अहंकार आदि अनेक पाप कर्मों से परे होकर, पूर्णतः शुद्ध और पाप कर्मों का पूर्णतः त्याग करके ''अपापविद्धम्'' अर्थात् पाप वृत्ति से पूर्णतः परे होकर अपने स्वरूप (जीवात्मा) एवं परमात्मा के स्वरूप को जानना होगा।

क्योंकि वेदों ने स्पष्ट किया है कि ईश्वर को जाने बिना ना तो मृत्यु को जीता जा सकता है, ना कोई सुख प्राप्त किया जा सकता है और ना ही अपने स्वरूप (जीवात्मा) को जाना जा सकता है। ***(देखें यजुर्वेद मन्त्र 31/18)***

यह शुद्धिकरण, परमात्मा की प्राप्ति एवं अपने स्वरूप को जानना तभी सम्भव है, जैसे कि अन्जना बेटी ने अपने लेख में लिखा कि हमारे द्वारा वेद के ज्ञाता, विद्वानों का संग किया जाए।

इस विषय में ***यजुर्वेद मन्त्र 19/39*** में उपदेश है कि जिज्ञासु जन वेद के विद्वानों के आश्रय में जाकर, वेद विद्या का आचरण करके, सभी बुराइयों को अपने अन्दर से निकाल कर, पवित्र बनें। यह बुराइयाँ ऊपरलिखित काम–क्रोध और पाप कर्म आदि ही हैं जिनका शिकार मनुष्य हो जाता है क्योंकि साधारण जन के पास वेद विद्या का वर्तमान काल में अभाव सा ही दृष्टिगोचर होता है और यह वैदिक नियम है कि विद्वानों से वेद विद्या प्राप्त किए बिना काम–क्रोध एवं पाप कर्म आदि से छुटकारा पाना असम्भव है।

इसमें सन्देह नहीं कि काम–क्रोध, मद–लोभ, अहंकार, ये मनुष्य के भयंकर शत्रु हैं, जो जन्म–जन्मांतरों से जीव के पीछे लगे हुए हैं तथा जिनका कारण मनुष्य द्वारा वेद मार्ग पर ना चलना है। जैसा अन्जना बेटी ने कहा कि क्रोध तो मनुष्य का बहुत ही भयंकर शत्रु है। ***भगवद् गीता श्लोक 2/62*** में उपदेश है कि विषयों का चिन्तन करने वाले पुरुष की उन विषय भोग में आसक्ति उत्पन्न हो जाती है। आसक्ति से विषय भोग की कामना उत्पन्न होती है और कामना पूर्ण न होने से क्रोध उत्पन्न होता है। अतः ऋग्वेद में उपदेश है कि साधक को वैदिक साधना द्वारा अपनी इच्छाओं पर संयम रखना आवश्यक है और मन में सदा कल्याणकारी कामनाएँ ही आएँ। ***(देखें यजुर्वेद मन्त्र 34/1,2)*** VIV

वेद कहें

शाकाहारी भोजन ही करें

स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'

वेदों में अनन्त विद्या है। इसी में स्वास्थ्य लाभ की अमूल्य विद्या और दवाइयों का भी ज्ञान है। एक दिन अचानक मेरी दृष्टि यजुर्वेद के नीचे लिखे मन्त्र पर गई और इस मन्त्र को हमने नित्य हवन/यज्ञ करने के मन्त्रों से जोड़ दिया, इस उद्देश्य से कि हर जिज्ञासु परमेश्वर से नित्य इस मन्त्र के द्वारा स्वास्थ्य लाभ के लिए प्रार्थना और पुरुषार्थ करे और ईश्वर के दिए हुए इस अमूल्य अद्‌भुत शरीर को स्वस्थ रखने के लिए सदा जागरूक रहे। पुनः प्रातः काल की सैर, व्यायाम, योगासन आदि द्वारा पुरुषार्थ भी करता रहे। जहाँ प्रार्थना और पुरुषार्थ दोनों साधना होंगी वहाँ परमेश्वर यज्ञ में जिज्ञासु की कामना पूर्ण करता है। मन्त्र है—

"आन्त्राणि स्थालीर्मधु पिन्वमाना गुदाः पात्राणि सूदुघा न धेनुः।
श्येनस्य पत्रं न प्लीहा शचीभिरासन्दी नाभिरुदरं न माता॥

(यजुर्वेद 19/86)

चारों वेदों के मन्त्रों में माँस—मदिरा आदि का सेवन वर्जित और पापयुक्त कहा है। फलस्वरूप ही ईश्वर ने शाकाहारी भोजन का विधान किया है। अतः ईश्वर की पृथिवी पर हम वेदों में कहे ईश्वर के नियमों पर ही चलें। फलस्वरूप ही हम सुखपूर्वक जीवन व्यतीत कर पाएँगे। प्रस्तुत मंत्र में भी मनुष्य को शाकाहारी, पौष्टिक आहार ग्रहण करके शरीर को निरोग रखने का उपदेश किया है। स्पष्ट है कि यदि हम शाकाहारी भोजन त्यागकर मांस मदिरा का सेवन करेंगे तब हमारा शरीर भिन्न—भिन्न रोगों का अड्डा बन जाएगा और जीवन दुःखमय हो जाएगा। मांस का सेवन हिंसा किए बिना नहीं होता। आप बेकसूर, मासूम जानवरों को मारेंगे या मरवाएँगे, जो आपका विरोध कर ही नहीं सकते, तब ऐसी पाप वाली हिंसा का फल भी सदा दुःखदायी होता है। इससे काम, क्रोध, लोभ, घरों में कलह आदि का साम्राज्य हो जाता है फलस्वरूप मन में अशांति और आयु में कमी रहती है।

प्रस्तुत मंत्र हमें शाकाहारी भोजन करके निरोग रहने की प्रेरणा दे रहा है, हम प्रतिदिन इस मंत्र की अर्थ सहित आहुति डालकर परमेश्वर को विश्वास दिलाएँ कि हम आपके उपदेश के अनुसार शाकाहारी भोजन ही करते हैं। फिर परमेश्वर प्रसन्न होकर क्यों ना हमें दीर्घायु और निरोग रहने का आशीर्वाद देगा।

मन्त्र का अर्थ– हे मनुष्य! (शचीभिः) वैदिक ज्ञान से शुद्ध की हुई बुद्धि और कर्मों से (स्थालीः) अन्न पकाने वाले पात्रों को अग्नि के ऊपर रखकर औषधियों का पाक {भोजन} बनाकर उसमें (मधु) मधुर गुण वाला अन्न डालकर ग्रहण करो–खाओ।

यहाँ हम परमेश्वर की महिमा को देखें कि सृष्टि के आरम्भ में ही वह मनुष्य को अग्नि पर भोजन बनाकर खाने का उपदेश कर रहा है। प्रारम्भ में जिसको भी यह वैदिक ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ, वे कई जंगली जातियाँ अज्ञानवश कच्चा कंदमूल और कच्चे मांस तक को खा जाते हैं, जो सदा हानिकारक होता है। इसलिए हम सारा शाकाहारी भोजन अग्नि पर पकाकर ही खाएँ।

आगे मंत्र में कहा कि ऐसा अन्न खाने से (आन्त्राणि) पेट में इस अन्न द्वारा पुष्ट हुई नाड़ियों को (पिन्वमानाः) सेवन करने के लिए (गुदाः) गुप्त इन्द्रियों को और (पात्राणि) भोजन के पात्रों को (सुदुघा) सुख से दूध देने वाली (धेनुः) गाय के (न) समान (प्लीहा) तिल्ली (नाभिः) नाभि और (उदरम्) पेट को पुष्ट करें, मज़बूत करें, निरोग करें। भाव स्पष्ट है कि ऐसे सात्विक अन्न और कई प्रकार की रोग दूर करने वाली औषधियों को अग्नि पर पकाकर हम औषधि भी तैयार करें जिसके सेवन से हमारी आयु बढ़ेगी और हम निरोग रहेंगे। आप यदि वैदिक विद्या पर ध्यान दें तो आपको ज्ञात होगा कि ईश्वर, भोजन को भी अग्नि पर पकाकर खाने को कह रहा है और औषधि–दवाइयों (Medicines) को भी अग्नि पर पकाकर बनाने की प्रेरणा दे रहा है। आज ऐलोपैथिक, आयुर्वेदिक, होमियोपैथिक, युनानी आदि औषधियाँ गरमी देकर ही पकाई जाती हैं। बिना अग्नि–गरमी दिए कोई भी दवाई, भोजन, व्यंजन आदि नहीं बन सकते। अतः हमें यह जानना चाहिए कि यह तकनीक हमें भगवान की ही दी हुई है, हम उसका यज्ञ करके धन्यवाद करें।

संसार की हर तकनीक में भगवान का ही उपदेश है। लेकिन वेद न जानने के कारण मनुष्य इस सत्य को जानता नहीं।

वह परमात्मा की तकनीक का प्रयोग तो करता है लेकिन परमात्मा को धन्यवाद न देकर पाप का भागी बनता है। इसी कारण संसार में दु:खों की बाढ़ आ गई है।

पुन: उपमा अलंकार में ईश्वर ने समझाया कि ऐसा सात्विक–शाकाहारी भोजन करके (श्येनस्य) बाज़ के (पत्रम्) पंख के (न) समान तिल्ली, पेट को पुष्ट करें। बाज़ के पंख बहुत मज़बूत होते हैं और वह भी लम्बी उड़ान भरता है और आकाश में भी कलाबाज़ियाँ करके अपना शिकार पकड़ता है। तो ऐसे शुद्ध भोजन से हमारा पेट, तिल्ली, आँतड़ियाँ आदि बाज़ के पंख के समान मज़बूत हों और ऐसे भोजन से निश्चित ही अंग पुष्ट होते भी हैं। विपरीत में मांस आदि खाकर शरीर कमज़ोर और बीमार होता है। पुन: ईश्वर ने कहा कि (माता) माता के (न) समान (आसन्दी) सब ओर से रस प्राप्त करें अर्थात् माता का दूध उसके सारे शरीर का रस होता है और बल तथा बुद्धि प्रदान करने वाला होता है। ईश्वर उपदेश कर रहा है कि यह शाकाहारी भोजन भी माता के दूध के समान नाभि, पेट, आंत और सभी अंगों को पुष्ट करने वाला होता है। क्योंकि यह रस भी शाकाहारी भोजन, वनस्पती का निचोड़ है।

भावार्थ– जो मनुष्य ईश्वर द्वारा दिए उपदेश को मानकर सुगन्धित अन्नों एवं रसों से शरीर में स्थित गुदा आदि इन्द्रियों, पेट, तिल्ली, नाड़ियों और नाभि को पुष्ट करते हैं, वे दीर्घायु प्राप्त करके सुखी जीवन व्यतीत करते हैं। वर्तमान काल में अनेक बीमारियों से भी जूझने के लिए शाकाहारी–पुष्ट भोजन ही ग्रहण करने की आवश्यकता है, इसमें गाय का दूध, गाय का घी, जौ, चावल, दालें, फल आदि आवश्यक हैं और भिन्न–भिन्न प्रकार की औषधियों की आवश्यकता है जैसे आँवले का रस, गाजर का रस, पालक का रस इत्यादि–इत्यादि। हमें वैदिक ज्ञान द्वारा यह समझ लेना है कि ऊपर कहे शरीर के अंग पेट, तिल्ली, आँत, गुदा आदि अत्यन्त सूक्ष्म और कोमल अंग हैं। इन्हें कोमल शाकाहारी भोजन ही ताकत देकर पुष्ट कर सकता है ना कि माँसाहारी भोजन।

Over Come Death

Swami Ram Swarup 'Yogacharya'

We daily observe that several human-beings meet with death and such departed souls start their journey for a hidden untrodden space where nobody becomes able to visit with human-body.

Infact, according to ***Yajurved mantra 1/1,*** the human-body has been provided by God to the soul to do worship to destroy sorrows, to overcome cycle of birth and death and thus to attain salvation. Otherwise, according to ***Patanjali Rishi's Yog Shastra sutra 2/3,*** amongst the five great sufferings, the most sorrowful suffering to be experienced is death.

Besides, it is an eternal and everlasting truth that the death swallows learned as well as ignorant persons equally. (Yog Shastra Sutra 2/9 refers).

This is only the cruel death where recently our forty jawans have been swallowed by it and the whole family of soldiers including our nation have been left behind with grief-stricken hearts and eyes full of tears.

Living-beings include human-beings but there is a vast difference between the two, i.e. human-beings if follow spiritual and worldly pious paths simultaneously, then they become able to overcome death and thus make their future bright by destroying all sorrows and attaining salvation whereas the said opportunity has not been awarded by God to other living-beings.

Let us also pay our attention towards ***Chanakya Neeti*** which preaches that there are four qualities which are

equally applicable to human-beings and other living-beings. Those qualities are-eating, sleeping, fearing and reproducing. But one divine quality of Dharma i.e. worship, to discharge moral duties towards family, society and nation and to do only the pious deeds which are mentioned in Vedas, distinguish human-beings from other living-beings.

Therefore, if human-beings donot follow the said path, naturally no difference remains between the two i.e. God and learned treat human-beings like other living-beings and accordingly the result of karmas in the shape of sorrows is awarded to them and facing of cycle of birth and death continues.

So, those who are desirous of overcoming death, destroying the sorrows, experiencing divine pleasure and attaining salvation, being the main motto of human-life, then those aspirants will have to follow the vedic path to worship the greatest, Formless Almighty, God Who is divine form of light, creates, nurses and destroys the universe, Whose name, form and unlimited divine qualities are mentioned in eternal knowledge of Vedas by God Himself. You see, without knowing the said God, nobody can overcome the cruel and most painful suffering death.

In this regard, I would like to quote here, ***Yajurved mantra 31/18*** as under-

"Vedaahametam Purusham Mahaantamaadityavarnnam Tamasaha parastaat, Tamev Viditvaati Mrityumeti naanyaha pantha Vidyateayanaaya."

In this ved mantra, there is a preach to an aspirant [So, let us be good aspirants by listening Vedas.] that Oh! aspirant, I (Ved) know the God, Who creates all the worldly matters from prakriti, (Mahaantam) has unlimited divine qualities (Adityavarnnam) who is form of divine light i.e. He gives the light to sun, moon and the whole world etc. but He never takes light from any source, (Tamsaha Parastaat) Who is away from ignorance/illusion (Purusham) He is Almighty and perfect in all respects (Tamev Viditva) by knowing Him only, you (Ati eti) overcome (Mrityum) the severe pain of death.

In the last, mantra preaches a deep advice for the whole universe that (Anyaha Panthaha Na Vidyate) without knowing the said God there is no other path to overcome the death (Aynaaya) and by destroying the sorrows to attain final liberation.

Meaning- In this ved mantra, there

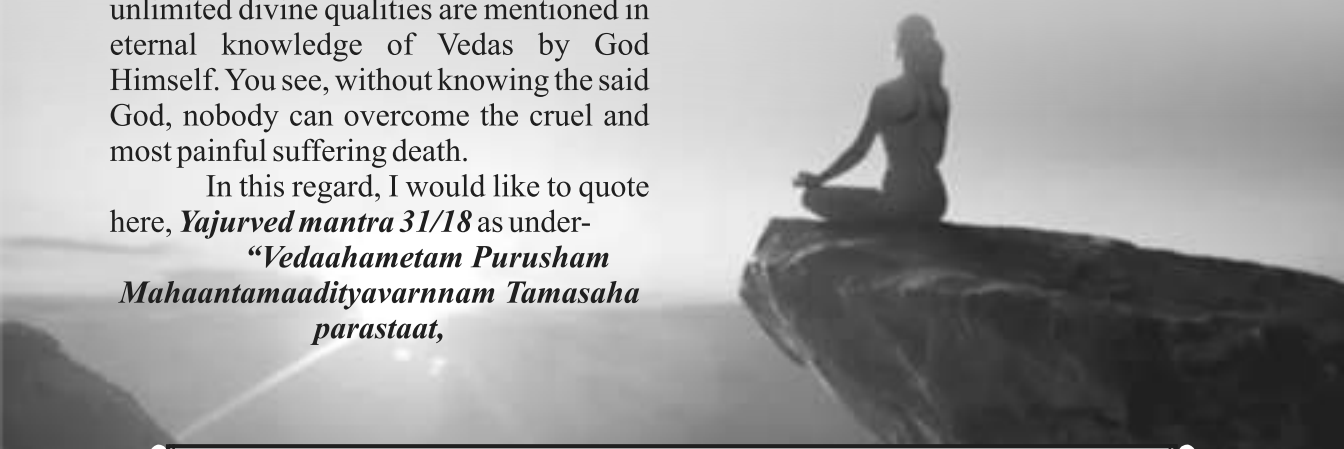

is a preach to an aspirant [So, let us be good aspirants by listening Vedas.] that Oh! aspirant, I know the God, Who creates all the worldly matters from prakriti, has unlimited divine qualities who is form of divine light i.e. He gives the light to sun, moon and the whole world etc. but He never takes light from any source, Who is away from ignorance/illusion. He is Almighty and perfect in all respects by knowing Him only, you overcome the severe pain of death.

In the last, mantra preaches a deep advice for the whole universe that without knowing the said God there is no other path to overcome the death and by destroying the sorrows to attain final liberation.

Infact, the traditional Vedic preach from learned Rishi-Munis has been meant for a good aspirant and since we are human-beings and ***our main motto of life is to attain salvation by worshipping God***

by following vedic path, therefore, it is our moral duty entrusted by God in Vedas to become good aspirants, in the absence of which, we would not be able to know the eternal, everlasting, immortal, omnipresent and Almighty God whose description is mentioned in Vedas by God Himself and not by any other human-being etc. otherwise, what would be the use of doing worship without knowing the above cited God, ask Vedas. You know, the above quoted ***Yajurved mantra 31/18*** emphasis forcefully that the death is overcome by knowing the only God who has been described as above and whose unlimited divine qualities are mentioned in Vedas by God Himself and not by any Rishi-Muni or human-being.

So, like the previous yugas, we will have to revert back to Vedas to escape from the cruel claws of death.

VIV

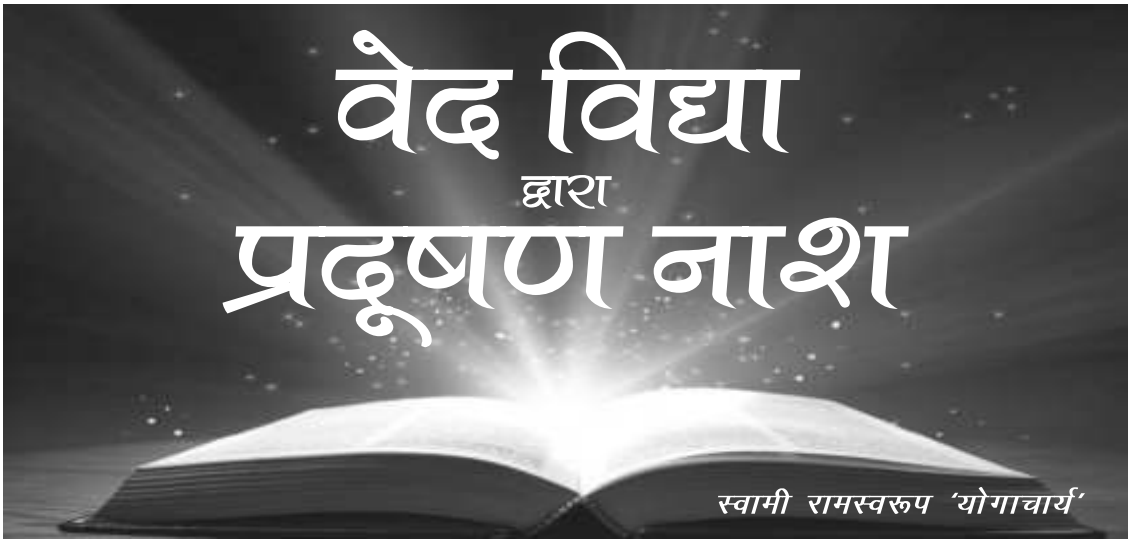

सतयुग, त्रेता एवं द्वापर युग में हमारे देश की प्रजा शुद्ध जलवायु घने वन एवं शुद्ध औषधि आदि द्वारा निरोग, सुख–सम्पदा तथा दीर्घायु आदि गुणों से युक्त थी। परन्तु आज देश प्रदूषण के भयंकर प्रभाव से अनेक रोगों से पीड़ित, दु:खी तथा अल्पायु में ही मृत्यु आदि का ग्रास बनता जा रहा है। शास्त्र का वचन है– ''कारणमन्तरा न कार्यस्योत्पत्ति:'' अर्थात् कारण के बिना कोई भी कार्य नहीं होता। अत: जहाँ वेदों में प्रदूषण का नाश करने के लिये यज्ञ का आह्वान किया है वहीं वर्तमान में प्रदूषण फैलने का कारण वेदोक्त धर्म में आई कमी से यज्ञ न करना, औद्योगिक कारखानों से अशुद्ध पदार्थ व कचरा निकलने की उचित व्यवस्था को न होना, पवित्र नदियों में शहरों की मलमूत्र आदि गंदगी एवं मलबा डालना, ढेर सारे वाहनों से निकली दूषित वायु की रोकथाम की व्यवस्था न होना, बड़े–बड़े शहरों में अधिकतर सरकार द्वारा सफाई की सुव्यवस्था न होने के फलस्वरूप घरों के कूड़े–करकट को जहाँ कहीं भी डाल देना, खुली नालियों में गंदगी का जमा होना, अव्यवस्थित झुग्गी–झोपड़ी में रहने वाली जनता द्वारा जहाँ–तहाँ मलमूत्र का त्याग तथा स्नानादि एवं उनकी सुव्यवस्था न करना यह सब जलवायु के प्रदूषण भी एक समस्या हैं जिसमें शोर शराबा, ऊँचे–ऊँचे स्वरों में रेडियों, दूरदर्शन इत्यादि का सुनना, दिन–रात ऊँची–ऊँची आवाजों में लाऊडस्पीकरों का कोलाहल इत्यादि ऐसे व्यवहार मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक दोनों स्थितियों पर आघात कर उसे रोगी बनाए जा रहे हैं। वेदों में कहे यज्ञ द्वारा इस गंभीर समस्या का हल निश्चित ही प्रमाणिक एवं तुरंत प्रभावशाली है।

प्राचीन काल में जब केवल वैदिक संस्कृति ही पृथ्वी पर अपने वैभव से पूर्ण थी उस समय हमारे ऋषि–मुनि नित्य विधिपूर्वक यज्ञ किया करते थे, धर्म के प्रभाव के कारण उस समय मनुष्य

प्रकृति के साथ कदापि भी नहीं उलझता था। फलस्वरूप देश में समय पर वर्षा, घने जंगल और हरी–भरी वनस्पतियाँ ही दृष्टिगोचर होती थी। देखें ***सामवेद मंत्र 529–''अक्रांत्समुद्रः... ..... बृहत्सोमो वावृधे स्वानो अद्रिः''***

अर्थात् यज्ञ की अग्नि में डाले हुए पदार्थ वर्षा का पानी बरसाने का कारण बनते हैं और पृथिव्यादि लोक की जनता को अन्न आदि वनस्पति, गौर आदि पशुओं के लिए चारा बढ़ाकर जीवन की रक्षा करते हैं। स्वयं श्रीकृष्ण ने गीता में अपने को वृक्षों में पीपल कहकर वनस्पति, विज्ञान को संरक्षण दिया है। ***अथर्ववेद 4/15/1*** में कहा कि यज्ञ द्वारा चारों दिशाओं में बादल आएँ, वायु बहे, मेघ गर्जना करते हुए जल धाराओं की वर्षा करके पृथ्वी को तृप्त करें, बिजली कड़के, समुद्र उछल पड़े, भूमि पर ऐसी वर्षा हो कि किसान अपने घर जाकर आश्रय लें।

ऋग्वेद मंत्र 10/146/3–6 में वन जीवन एवं प्राकृतिक सम्पदा के प्रति कृतज्ञता का अनोखा वर्णन दर्शनीय है। वनों में नील गाय आदि पशु घास खाते विचरते हैं। सायंकाल में तीव्र वायु के झोंके ऐसे लगते हैं जैसे गाड़ियाँ चलती हों। ग्वाला गौओं को चराकर ले जाने के लिए सायंकाल गऊओं को पुकारता है। रात्रि में वन में रहते हुए मनुष्य ईश्वर स्तुति करते हुए अपने को धन्य मानते हैं। यदि कोई उन पर आक्रमण न करे तो वन तथा वन में रहने वाले पशु किसी की हिंसा नहीं करते। स्वादिष्ट फल खाकर मनुष्य अपने घर चले जाते हैं। सुगन्ध वाली कस्तूरी आदि वनस्पति तथा खाद्य पदार्थ–अन्नादि तथा जंगली पशुओं से भरपूर गुणों वाले वनों की मैं स्तुति करता हूँ। स्पष्ट है कि वेदमन्त्र वन और वन में रहने वाले पशु–पक्षियों का मनुष्य के साथ मैत्रीभाव का अति सुन्दर वर्णन करते हैं। यहाँ भी परस्पर नैतिकता का दर्शन है। महाभारत आदि ग्रन्थों में कहा कि वनों में रहने वाले किसी ऋषि–मुनि अथवा अन्य प्राणी को किसी भी हिंसक पशु ने कभी नहीं सताया। इस सुख को वेदों के ऊपर कहे मन्त्रों में यज्ञ का सुन्दर फल कहा है।

मनुस्मृति श्लोक 1/49 में ऋषि ने पेड़–पौधों में मनुष्य की तरह जीवन होना कहा है जिसे वर्तमान काल के वैज्ञानिकों ने भी सिद्ध किया है। अथर्ववेद में कहा: सूर्यो मे चक्षुर, वातः प्राण अन्तरिक्षम् आत्मा, पृथिवी शरीरम् ***(अथर्व. 5.9.7.)*** अर्थात् सूर्य मेरी आँख है, वायु, प्राण, आत्मा अन्तरिक्ष और शरीर पृथ्वी है। द्युलोक व पृथ्वीलोक मेरा रक्षण करते हैं। मंत्र में आत्मा की रक्षा सूर्य, चांद आदि पिण्ड एवं पृथ्वीलोक की जलवायु, वन तथा वनस्पतियाँ आदि पदार्थ हमारे जीवन की रक्षा करते हैं, उनका ही हमने भक्षण, दुरूपयोग एवं अनैतिकता, उनसे छेड़छाड़ करके प्रदूषण को बढ़ावा देकर जीवन को कठिनाई में डाल दिया है। इस ज्ञान के दृष्टा ऋषि–मुनि नित्य पृथ्वी पर यज्ञ करके जलवायु को शुद्ध करके मानव का कल्याण करते थे। ***तुलसीदास*** कहते हैं ***''कोटि वाजि मेध प्रभु किनै''*** अर्थात् श्री राम ने करोड़ों यज्ञ अपने जीवन में किये थे। इसी प्रकार श्री कृष्ण ने यज्ञ किये एवं कराए थे। ***परन्तु सामवेद मन्त्र 630 में कहा कि ब्रह्माण्ड के छोटे–बड़े सभी पिण्ड नियमानुसार***

अपनी–अपनी अक्ष तथा कक्षा में घूमते हैं। यह एक दूसरे का अतिक्रमण नहीं करते। इनकी गति में एक विशेष नियम बद्धता है, जिसके विरोध में कोई भी पिण्ड नहीं जाता। इसे ही हम नैतिकता कहें तो उत्तम होगा। यही नैतिकता परमेश्वर ने मनुष्य को भी वेदों में सिखाई है कि मनुष्य नियम अनुसार जीवन व्यतीत करें। प्रकृति के दायरे में घुस कर नैतिकता का हनन् करके प्रदूषण को आमंत्रित किया है। फलस्वरूप भयंकर दु:ख बच्चों के स्वास्थ्य की हानि, अल्पायु में मृत्यु और आने वाली पीढ़ियों का जीवन विष युक्त करके त्रस्त किया है। चारों वेदों में सूर्य को ऊर्जा का स्त्रोत कहा है। ***ऋग्वेद मंत्र 8/77/4*** में कहा कि सूर्य की एक किरण ही तीसियों सरोवर का जल पी जाती है, अर्थात् अन्तरिक्ष में इस प्रकार जल का अनन्त भण्डार है। परन्तु सामवेद कहता है कि जैसे ग्वाला गाय को चारा देता है तब गाय बदले में उसे अमृत स्वरूप दूध देती है, इसी प्रकार जब यज्ञ की अग्नि में डाली हुई सामग्री रूपी चारा वायु के साथ सूर्य लोक पहुँचता है तब सूर्य शुद्ध वर्षा पृथ्वी पर करता है। ***यजुर्वेद मन्त्र 1/2*** में कहा कि यज्ञ प्रदूषण का नाश करके पृथ्वी पर पवित्रता फैलाता है। ***''मातरिश्वनो घर्मोऽसि''*** वायु को शुद्ध करता है। शुद्ध वायु जब सरोवर इत्यादि जलाशय को स्पर्श करती है तब जल शुद्ध होता है। ***यजु. 1/1*** में यज्ञ करने की प्रेरणा देते हुए कहा कि यज्ञ सब रोगों का नाशक है। ***यजुर्वेद मन्त्र 18/29*** में आयु यज्ञ से बढ़ती है, इन्द्रियाँ यज्ञ से शुद्ध होती हैं। परमात्मा यज्ञ से प्राप्त होता है इत्यादि अनेक गुण कहे हैं। ***सामवेद मन्त्र 1488*** में कहा कि सूर्य यज्ञ से आहार लेकर (सोमपान) पश्चात् वायु के कीटाणुओं का नाश करके वायु शुद्ध करता है। परन्तु ***सामवेद म. 1487*** में सूर्य यज्ञ के आहार को लेकर ही समय पर वर्षा, वायु शुद्धि एवं कीटाणुओं का नाश करता है। ***यजुर्वेद मन्त्र 12/30*** में कहा यज्ञ की जलती अग्नि में घी एवं सामग्री आदि की आहुति देकर विद्या एवं सुशिक्षा को बढ़ाओ। ***सामवेद मन्त्र 67, 160 एवं 338*** में कहा कि यज्ञ में डाले पदार्थ पृथ्वी, द्युलोक के ऊपर को जाने वाले, सब मनुष्यों के हितकारी तथा प्राणियों के रक्षक हैं। इसके लिए हम सूर्य को यज्ञ द्वारा सोम अर्पित करें। यज्ञ के प्रभाव से अंतरिक्ष में बिजली और मेघ की शक्ति में वृद्धि होती है तब सूर्य द्वारा

जल की वर्षा होती है।

यास्क मुनि रचित ***शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थ 14/4/2–3/29*** में बड़ा सुन्दर वर्णन है कि– ''जीवात्मा ने चाहा कि मेरी स्त्री हो, मेरी सन्तान हो, मेरे पास धन हो और मैं यज्ञ करूँ। इन सब कामनाओं को चाहने वाला इससे अधिक न चाहे''। ***यजुर्वेद 2/23 मन्त्र*** में कहा है कि घृत सामग्री आदि जो पदार्थ सब प्राणियों के उपकारक यज्ञ में प्रयोग नहीं होता, यह दुष्ट जनों के उपयोग करने योग्य होते हैं। ***श्रीमद् भगवद्गीता के ''कर्म ब्रह्मोद्भवं..... ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्'' इस श्लोक 3/15*** में कहा कि हे अजुर्न, यज्ञ कर्म को तू वेद से उत्पन्न हुआ जान, वेद अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न हुआ जान, इससे सर्वव्यापी परमेश्वर सदा ही यज्ञ में प्रतिष्ठित है। ***यजुर्वेद 18/29*** में कहा ***''आयुः प्राणः मनः आत्माः ब्रह्म, ज्योतिः, स्वः यज्ञेन कल्पन्ताम्''*** अर्थात् आयु धर्मादि सहित परमेश्वर प्राप्ति यज्ञ से ही सिद्ध है।

प्रदूषण के दो ही घटक मुख्य हैं। पहला जल एवं दूसरा वायु। इन दोनों की शुद्धि सुखी जीवन के लिए आवश्यक है। वेद विज्ञान तो अनन्त है ऐसा कश्यप ऋषि कह गए हैं। परन्तु ऊपर दिए हुए वेदमन्त्रों के मनन से ज्ञात होता है कि जब तक मनुष्य यज्ञ की अग्नि द्वारा सूर्य को चारा (सोमपान) नहीं कराता तब तक न तो वायु शुद्ध हो सकती है और न ही समय पर वर्षा द्वारा शुद्ध जल प्राप्त किया जा सकता है जो प्राणी, वनों तथा पर्यावरण के लिए भौतिकवाद की चमक– दमक, सोने–चाँदी, उच्च पद इत्यादि से भी कहीं अधिक आवश्यक है। क्योंकि यज्ञ द्वारा प्राप्त शुद्ध अन्न, जल एवं वायु सुखमय जीवन का आधार है। यज्ञ केवल प्रदूषण का ही नाश नहीं करता अपितु ऊपर के मन्त्रों में कहा है कि निरोगता, दीर्घायु अनेक गुणों सहित इसके द्वारा ब्रह्म प्राप्ति भी सिद्ध है। इस सत्य को हमारे ऋषि–मुनि अच्छी प्रकार जानते थे। अतः पिछले तीनों युगों में मनुभगवान से लगातार ऋषि–मुनि, श्री राम, योगेश्वर कृष्ण सहित समस्त प्रजा ने नित्य प्रातः एवं सायं यज्ञ–अग्निहात्र करके ईश्वर की पूजा तथा साथ ही जलवायु की शुद्धि द्वारा मनुष्य का कल्याण किया है। यज्ञ से समय पर अच्छी वर्षा द्वारा जलवायु के शुद्ध रहने से वृक्षों के फल, पुष्प, खेतों में अन्न तथा वनस्पतियाँ शुद्ध एवं बलदायक होती है। वायु की शुद्धि से प्रदूषण का नाश फलस्वरूप रोगों का नाश, दीर्घायु एवं सुख–शांति में वृद्धि होती है। एक बार मुम्बई में प्लेग का रोग फैलने पर वहाँ के सब सम्प्रदाय के लोगों ने वैज्ञानिकों की सलाह पर यज्ञ शुरू करके लाभ प्राप्त किया था। ***''अग्निः वृत्राणि''*** सामवेद के इस मन्त्र सं. 4 में ईश्वर ने यह ज्ञान दिया है कि वेद मन्त्रों को उच्चारण करके जब अग्नि में आहुतियाँ डालते हैं तो इस क्रिया से अत्यन्त दुःखदायक रोगों का नाश होता है। ***''अग्नेर्वै धूमो जायते....''*** इस ***शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थ (5/3/5/17)*** के अनुसार जो पदार्थ अग्नि में डाले जाते हैं वे सूक्ष्म परमाणु बनकर ऊपर बादलों में मिलकर वर्षा करते हैं। वर्षा से औषधि, औषधि से अन्न, अन्न से धातु और धातु से शरीर बनता है। ***शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थ (2/3/3/15)*** में यज्ञ–अग्निहोत्र को स्वर्ग

में पहुँचाने वाली एक नौका कहा है। स्वर्ग का वैदिक अर्थ मोक्ष का सुख है। महाभारत में श्वेती राजा ने यज्ञ से 120 वर्ष की आयु प्राप्त की तथा परिवार सहित मोक्ष प्राप्ति की थी। फ्राँस के वैज्ञानिक त्रिले ने हवन–यज्ञ की वायु पर अनुसंधान किया है। उन्होंने कहा कि हवन में आमतौर पर आम की लकड़ी जलती है जिससे ***''फार्मिक आल्डीं हाइड''*** नामक गैस निकलती है, जो किटाणुओं को नष्ट करके जलवायु को शु; कर देती है। हवन के अनुसंधान के बाद ही वैज्ञानिकों ने ***''फार्मोलिन''*** नामक किटाणुनाशक औषधी का निर्माण किया है जो घरों में प्रयोग में लाई जाती है। ***''टाटालिक''*** नामक वैज्ञानिक ने यज्ञ–हवन में प्रयोग किए हुए सामग्री के साथ किशमिश, मुनक्का इत्यादि धुएँ से यह सिद्ध किया है कि यदि इस धुएँ में आधे घंटे तक रहा जाए तो ***''टाइफाइड''*** तक के कीटाणु भी नष्ट हो जाते हैं। हवन में शक्कर एवं गुड़ का प्रयोग चेचक, हैजा, एवं टी.बी. तक के रोगों को भी नष्ट कर देता है। ***(यजु. मं. 1/1)***

इस प्रकार हम देखते हैं कि यज्ञ से जलवायु शुद्ध होकर भयंकर रोगों तक का नाश कर देती है। प्रदूषण को नष्ट करती है। ऊपर वेदमन्त्र में सुहावने वन एवं शुद्ध अन्न, जलवायु का वर्णन है जो केवल वेदों ने यज्ञ का ही सुन्दर फल कहा है। ऋग्वेद में कहा–

ओ३म् मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः।। (ऋ. 1/90/6)

अर्थात् हे परमेश्वर! यज्ञमय जीवन बिताने के लिए वायु मधुरता युक्त बहें। समुद्र व नदियों के जल मीठे बहें एवं हमारे लिए औषधियाँ–अन्न रस भरे हों। अर्थात् भाव यह है कि यज्ञ द्वारा वायु, नदियों के जल, औषधी–अन्न शुद्ध एवं मधुरता से युक्त होते हैं।

ऊपर के मन्त्रों से यही सत्य प्रकट होता है कि सुखमय जीवन के लिए शुद्ध पर्यावरण परमावश्यक है और यज्ञ–अग्निहोत्र ही आज के प्रदूषण एवं रोगों को नष्ट करके शुद्ध पर्यावरण उत्पन्न करने में समर्थ हैं। सबके लिए शान्ति कारक, सुखदायक हों वैसा प्रयत्न करने की कामना करता है।

प्रदूषण की समस्या किसी जाति अथवा सम्प्रदायक विशेष की समस्या नहीं है यह मानव, देश एवं विश्व की समस्या है। दिल्ली, मुम्बई इत्यादि शहर को तो आने वाले समय में अत्याधिक प्रदूषण का शहर घोषित करने वाले हैं। अत: प्रदूषण जो यज्ञ द्वारा नष्ट होता है तो वह यज्ञ भी समस्त मानव जाति के कल्याण के लिए है। यज्ञ न होने से पदार्थ अशुद्ध रहते हैं और संसार की जनता को प्रदूषण द्वारा दु:ख मिलता है। अत: निष्पक्ष विचार करके हम सबको वेदों में कहे यज्ञ का आह्वान करके प्रदूषण का जड़ से नाश कर देना चाहिए। इसी से शुद्ध जलवायु औषधी–अन्न प्राप्त करके सब दीर्घायु, नीरोगता एवं सुख शांति को प्राप्त करें। यह वेद मन्त्र

''ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः, शान्तिब्रह्मा शान्तिः सर्वः शान्तिः,
शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।। (यजु. 36/17)
सूर्य, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, जल, औषधियाँ, वनस्पतियाँ आदि सबके लिए शान्ति कारक, सुखदायक हो वैसा प्रयत्न करने की कामना करता है। VIV

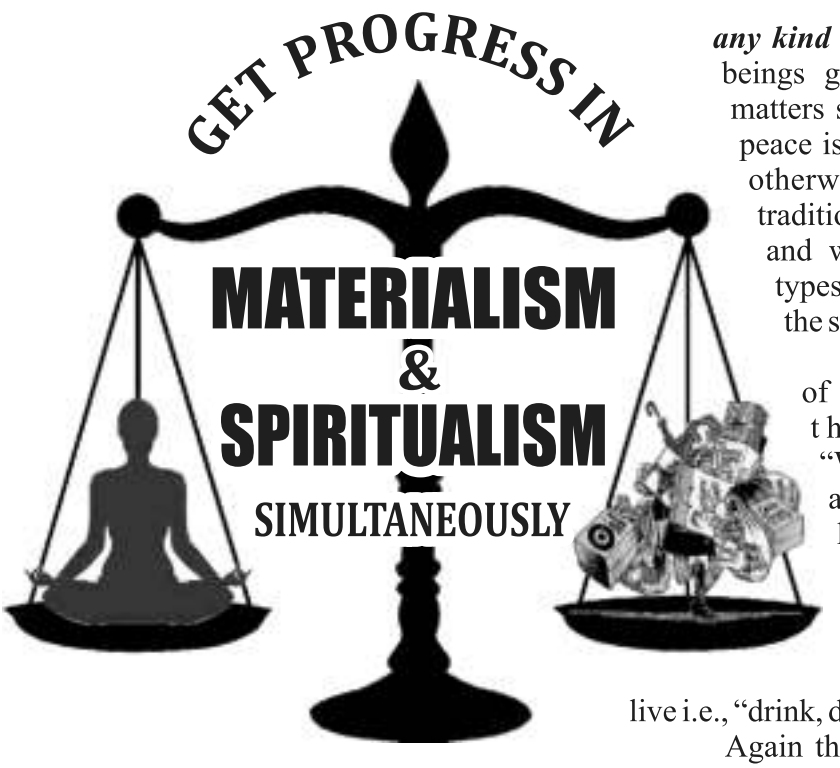

Swami Ram Swarup 'Yogacharya'

Vyas Muniji states that in the absence of the knowledge of creation that how God creates the universe, nobody can be considered a learned. From the knowledge of creation only, one becomes able to know about each non-alive matter of universe, its best utilization and to make our lives comfortable, long and happy. ***This is called materialism i.e. knowledge of worldly matters- science.***

Second part of creation which is required to be known is ***spiritualism which destroys illusion, enables us to control our senses and thus prevents us from doing any kind of sin.*** So, when human-beings get progress in both the matters simultaneously, then only peace is maintained on the earth, otherwise ravages of hatred, tradition of blind faith, violence and what to talk that several types of sins are committed in the society.

Therefore the learned of Vedas in Atharvaved ask the human-beings, "Whether you only try to attain the spiritual knowledge about god or oversighting spiritualism, you are only after the materialistic articles of the world to live i.e., "drink, dine and be merry".

Again they ask whether you only try to know and obtain all the materialistic articles of the world to get merriment? i.e., A person tries hard and gets all kinds of wealth/materialistic articles for his own use as well as for the use of his family to get pleasure/merriment. In this regard, Vedas ask whether the said wealth/materialistic articles have ever been pleasure giving, fulfill or increase your wishes or the articles are as usual left behind at the time of death.

Similarly, in the matter of food, Vedas ask whether you have eaten food or the food has eaten you. ***Vedas emphasis that only one sided knowledge/progress either in materialism or spiritualism is always harmful*** as in the absence of

materialistic articles nobody can survive whereas in the absence of knowledge of Brahma (spiritualism) human-beings will be indulged in illusion, nobody would stop them from committing corruption and thus human lives will always be sinful. ***(Atharvaved mantra 11/3(1)/26 refers)***

When the question to get progress in both the above said knowledge simultaneously arises then ***Yajurved mantra 40/14*** also preaches to attain the eternal, vedic knowledge traditionally wherein it is preached that alive (eternal form of spiritualism) and non-alive (above quoted materialistic articles) matters is required to be known.

Rigved states that God has created this land to provide us with all pleasures, comforts and long, happy life but the land would never give us pleasure etc. until we worship the God.

So, our ancient Rishi-Munis in their vedic scriptures like Mahabharat and Valmiki Ramayan have advised the human-beings to worship God, basically keeping in view the three subjects i.e., one should pray to God (Prarthna), should listen and chant ved mantras which describe His divine qualities (Stuti) and must worship Him by listening to Vedas, performing Yajyen, name jaap of God and practice of Ashtang Yog philosophy while performing all moral duties (upasana) which is being ignored nowadays, hence problem. Stuti, Upasana, Prarthna is called Trishu in Vedas. ***(Rigved mantra 1/24/13 refers).*** You see, Vedic Upasana is eternal and everlasting because it is preached by Almighty God Himself in Vedas and not by any mortal human-being.

Rigved mantra 1/24/12 preaches that learned of Vedas and Almighty God, both preach us through vedas which we must learn and hold in our daily life, to be away from doing sins and immoral deeds. It concludes that only in the absence of Vedic knowledge, most of the public of the world is now indulged in several sins, immoral activities, violence, blind faith etc.

Vedic Spiritualism enables a person to make his character good by controlling all his senses and organs keeping himself away from sins. God in Vedas tells us to know all the moral duties from vedas, viz. towards family, society, nation, services towards parents, elders selflessly, duties of politicians, mother, father, son, daughter, army, police, businessmen, agriculturists, spiritual masters and other unlimited subjects.

The above system when remains in vogue surely makes a nation strong, as was

in practice in the previous yugas. It restricts everybody from doing any kind of sin, which is necessary to make a nation strong and maintain peace all over the world.

Actually, the unlimited knowledge of Vedas can't be mentioned here due to the limited time and space. So, we must all try to know the secrets of Vedas to form the good character of inhabitants to enable them to discharge their moral duties faithfully to further unite the nation.

So, it concludes that by all means every citizen must try his level best to make contact with a learned acharya of Vedas and Yog Philosophy to listen and follow eternal vedic knowledge for the welfare of nation and all human-beings.

So, the study of the vedas is mainly to be carried out to realise God for destroying sorrows and achieving peace while taking the help of all materialistic articles. That is why, need of both the progress is necessary. But it is unfortunate that at present, most of the people of the world are only after the materialistic articles, pomp and show. While some others are only after self-made path, which is all against the Vedas and hence the problem.

Actually, when we set our eyes on the world, we find that the progress in materialism- science, education, atomic and nuclear energy, agriculture, medical science, space, animal husbandry, entertainment etc. and what to talk in unlimited fields has been achieved and still is going on all over the world.

On the other hand, progress in the matter of faith- eternal spiritualism briefed in Vedas which unites the human-beings, and spreads international brotherhood and condemns blind faith etc., as before, is observed to be negligible. Infact, our eternal vedic philosophy emphasis that to maintain peace on the earth, to get the best use of materialistic articles, attention will have to be paid to get more and more progress in vedic spiritualism.

Is it not true that mere worldly progress has now become acute headache for the world in the form of terrorism, corruption, women dishonour, robbery, theft, violence, injustice, poverty, casteism, hatred, several types of diseases which were not experienced in the previous yugas, only due to the effect of vedic knowledge which was in vogue. Infact, nobody wants sorrows but happiness/ pleasure.

Therefore all human-beings., as before, will have to pay their attention towards eternal Vedic knowledge to get progress in spiritualism as well as in materialism simultaneously.

VIV

कोई भी मनुष्य कर्म किए बिना नहीं रह सकता। बिना कामना के कर्म नहीं होता। मन में किसी भी कर्म को करने की कामना (इच्छा) उत्पन्न होती है, फलस्वरूप ही कर्म होता है! अत: हम धर्म की कामना करें, अधर्म की नहीं।

यजुर्वेद मंत्र 7/48 का भाव है कि कामना करने वाला जीव कर्म करता है और ईश्वर उसका फल देता है। यहाँ हम यह भी विचार करें कि धर्म शब्द के कई अर्थ हैं। धर्म का अर्थ स्वभाव भी है। उदाहरणार्थ हवा का धर्म (स्वभाव) बहना, बर्फ का ठण्डा होना, लोहे का पिघलना, लकड़ी का जल जाना। इसी प्रकार अन्य पशु–पक्षियों एवं पदार्थों के स्वभाव भिन्न–भिन्न प्रकार के हैं। जैसे हम मनुष्यों द्वारा बनाए हुए हिन्दु, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि अनेक धर्म भी हैं। हम इन सबका यहाँ अध्ययन नहीं कर रहे। वस्तुत: मानव को आचरण में लाने के लिए जो वैदिक धर्म (कर्तव्य–कर्म) है, उस पर ही विचार कर रहे हैं। यह हमें बार–बार समझना होगा कि किसी भी सत्य को स्थापित करने के लिए वेद एंव वेद पर आधारित ऋषि–प्रणीत ग्रन्थों का प्रमाण आवश्यक है। अप्रमाणिक विचार मिथ्या होते हैं। धर्म के विषय में ***मनुस्मृति श्लोक 2/12*** में कहा कि ईश्वर द्वारा वेदों में कहे शुभ कर्म, वेद ज्ञाताओं द्वारा लिखी स्मृतियाँ, सत्पुरुषों का आचार (आचरण) एवं आत्मिक ज्ञान द्वारा प्रिय आचरण, यह चार धर्म के लक्षण कहे हैं। इसमें ईश्वर द्वारा वेदों में कहे शुभ कर्म को ही धर्म कहा है।

इस विषय में ***मनुस्मृति श्लोक 2/6*** में पुन: कहा सम्पूर्ण वेद धर्म के मूल हैं। अर्थात् मनुष्य के करने योग्य कर्तव्य–कर्म वेदों से निकले हैं और वेद ईश्वर से उत्पन्न ज्ञान है। भाव है कि धर्म का स्वरूप (कर्तव्य–कर्म) तो केवल ईश्वर ही स्थापित करता है, अन्य कोई नहीं। हम वही कर्म करें जिस कर्म को करने में कोई भय–संशय, संकोच, लज्जा आदि ना आए। क्योंकि जब कोई इसके विपरीत झूठ बोलता है, विषय–विकार, चोरी–डकैती, ठगी, छल–कपट, हिंसा आदि करता है तो उस कर्म में उसको भय, शंका आदि उत्पन्न होती है। इससे समझ जाना चाहिए कि शरीर में स्थित आत्मा कह रही है कि ऐसे पाप कर्म मनुष्य जाति को करने योग्य नहीं हैं।

मीमांसा दर्शन, सूत्र 1/2 में कहा–

''चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मा:''

चोदना का अर्थ है प्रेरणा। भाव है कि ईश्वर ने वेदों में हमें जिस–जिस शुभ कर्म को करने की आज्ञा दी है, उसे ही धर्म कहते हैं और इसके

विपरीत यदि हम वेदों द्वारा प्रेरणा (वेदों में कहे) दिए हुए कर्म नहीं करते अपितु वेद विरुद्ध कर्म करते हैं तो उन कर्मों को करना अधर्म कहा है। यही कारण है कि अनादिकाल से यह परम्परा रही है कि सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर से वेद का ज्ञान उत्पन्न होता है और उस ज्ञान को ऋषि–मुनि हमें सदा देते आए हैं और कहते आए हैं कि वेद विद्या को सुनो और हे मनुष्यों! उसमें जो शुभ कर्म करने को कहे हैं, वही तुम्हारा धर्म है, ऐसा धर्म ही तुम्हारी रक्षा करता है और तुम्हें सुखी दीर्घायु प्रदान करके मोक्ष पद तक प्राप्त करा देता है। उदाहरणार्थ ***यजुर्वेद मन्त्र 40/2*** में कहा कि वैदिक शुभ कर्म करते–करते सौ वर्ष की आयु प्राप्त करो क्योंकि शुभ कर्म करते–करते आप पाप कर्म में लिप्त नहीं होंगे।

वैशेषिक शास्त्र सूत्र 1/2 में कहा कि मनुष्य के लिए वही धर्म है अर्थात् करने योग्य वही कर्तव्य–कर्म है जिसके करने से वर्तमान जीवन में अभ्युदय अर्थात् सुख–सुविधाएँ प्राप्त होती हैं और निःश्रेयस अर्थात् मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है।

अथर्ववेद मंत्र 10/8/43 में उपदेश है ***''पुण्डरीकं नवद्वारम्''*** अर्थात् पुण्य कर्म करने का साधन यह नौ द्वारों वाला शरीर ईश्वर ने हमें दिया है। इस शरीर में ही परमेश्वर का भी निवास है और इस शरीर द्वारा ही ईश्वर की यज्ञ, योगाभ्यास आदि शुभ कर्मों द्वारा पूजा की जाती है।

अतः हम इस शरीर से ईश्वर की वैदिक पूजा करें। अन्यथा अधर्म का आचरण करने से तो जीवन ही नष्ट–भ्रष्ट हो जाएगा।

अथर्ववेद मन्त्र 6/23/3 में स्पष्ट किया ***''सवितुः देवस्य''*** उस सृष्टि रचयिता परमेश्वर की ***''सवे''*** प्रेरणा में ***''मानुषाः''*** वेदों का मनन करने वाले मनुष्य ***''कर्म कृण्वन्तु''*** अपने कर्तव्य–कर्मों को करने वाले बनें। परमेश्वर तो वेदों में शुभ कर्म करने की प्रेरणा दे ही रहा है, धर्म का स्वरूप समझा ही रहा है परन्तु दुर्भाग्य से आज प्राणी विद्वानों से वैदिक शिक्षा ग्रहण न करने के कारण मनुष्यों की बातों में आकर पथ भ्रष्ट हो गया है। हम विचार करें कि ईश्वर की प्रेरणा से जो कर्म किए जाएँगे, वहीं तो सुख देने वाले, मोक्ष देने वाले कर्म होंगे, इसके विपरीत मनुष्यों द्वारा बनाए कर्म–धर्म तो प्रमाणिक न होने के कारण भी दुःखदायी ही होंगे। यही तो वेदों में कही मानव–धर्म शिक्षा है।

सामवेद मन्त्र 388 में ईश्वर को ***''ब्रह्मकृते''*** अर्थात् वेदों का निर्माता ***''विपश्चिते''*** अर्थात् ज्ञानदाता कहा है। भाव यह है कि ईश्वर से वेद उत्पन्न होते हैं और वेदों से ही धर्म, कर्तव्य–कर्म उत्पन्न हैं। यही भाव ***मनुस्मृति श्लोक 2/6*** में है–

''वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च''।।

ऐसा ही भाव ***भगवद्गीता श्लोक 3/15*** में है–
हे अर्जुन! (कर्म) कर्म को (ब्रह्म+उत्+भवम्) वेद से उत्पन्न हुआ (विद्धि) जान और (ब्रह्म) वेद (अक्षर+सम्+उत्+भवम्) अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न हुआ है।

दुर्भाग्य की बात है कि आज न कोई वेद की बात मानता है और न योगेश्वर श्री कृष्ण महाराज की। फलस्वरूप वेद एवं भगवद्गीता के विरुद्ध अंधविश्वास एवं थोथे कर्मकाण्ड किए जा

रहे हैं, जो दु:खदायी हैं।

चारों वेद यही तो कह रहे हैं कि धर्म (कर्तव्य–कर्म) वेदों से उत्पन्न हैं।

यही भाव ***ऋग्वेद मंत्र 8/43/24*** में है– जिसमें परमेश्वर को ***''धर्मणाम् अध्यक्षम्''*** अर्थात् समस्त धर्मों का अध्यक्ष/द्रष्टा कहा है। उक्त वचनों का सारांश यही है कि सब धर्म (कर्तव्य–कर्म) का निर्माण करने वाला, अध्यक्ष केवल एक परमेश्वर है, जिसने विशेषकर यजुर्वेद में ***''धर्म''*** (कर्तव्य–कर्मों) का अलौकिक अनन्त ज्ञान दिया है। सबसे प्रथम, पहले ही मन्त्र में ईश्वर ने ***''श्रेष्ठतमाय कर्मणे''*** कह कर यज्ञ को सर्वश्रेष्ठ कर्म कहा, जिस यज्ञ में बैठकर, ब्रह्मा/विद्वान् के मुख से युगों–युगों से कर्म का स्वरूप समझकर, शुभ कर्म करते–करते जीव ने सुख–शांति और यहाँ तक कि अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष को सिद्ध किया।

अत: पुन: हम समझें कि धर्म का स्वरूप समझाने वाला और शुभ कर्म करने की प्रेरणा देने वाला केवल एक सर्वशक्तिमान्, वेदों का रचयिता निराकार परमेश्वर है, अन्य कोई नहीं। अत: हम वेदाध्ययन से अपने कर्तव्य कर्म निश्चित करके, उनको जीवन में धारण करके मनुष्य का विशेष प्रयोजन जो मोक्ष प्राप्ति है, उसे प्राप्त करें।

वेदों पर आधारित तैत्तिरीयोपनिषद् के ऋषि ने कुछ शुभ कर्मों को करने का उपदेश इस प्रकार दिया है, जोकि मानव को धर्म की शिक्षा है:–

सत्यं वद। धर्मं चरं। स्वाध्यायान्मा प्रमदः।

सत्य बोलना, धर्माचरण करना, स्वाध्याय से प्रमाद मत करना, आचार्य को जो प्रिय हो वह दक्षिणारूप में उसे देकर ब्रह्मचर्याश्रम के बाद गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना और प्रजा के सूत्र को मत तोड़ना। सत्य बोलने से प्रमाद न करना, धर्माचरण से प्रमाद न करना, जिस बात से तुम्हारा भला हो उससे प्रमाद मत करना, अपनी विभूति बढ़ाने में प्रमाद मत करना, स्वाध्याय और प्रवचन में प्रमाद मत करना। पूर्ण वेद एवं योग विद्या का ज्ञान देकर तैत्तिरीयोपनिषद् में आचार्य ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी को अनुशासन में रखते हुए शिक्षा देता है कि आपने गृहस्थाश्रम में जाकर धर्म का आचरण (कर्तव्य कर्म निर्वाह करने हैं) करना है, जैसे सदा सत्य बोलना, वेदों में कहे कर्तव्य कर्म जो मनुष्य का धर्म है उसे करना। धर्म का केवल उपदेशन करना, धर्म को आचरण में लाना, स्वाध्याय करने में प्रमाद (आलस्य, हंसी मज़ाक आदि) न करना, आचार्य के लिए धन लाकर देना, विवाह करके उत्तम संतान प्राप्त करना, प्रमाद (आलस्य, निद्रा, व्यर्थ इधर–उधर घूमना, व्यर्थ की हंसी मजाक आदि) में पड़कर सत्य को कभी न छोड़ना, धर्म (कर्तव्य–कर्म) का त्याग न करना। प्रमाद में फंसकर स्वास्थ्य और बुद्धिमता का त्याग न करना, प्रमाद में फंसकर विद्या द्वारा उत्तम ऐश्वर्य की वृद्धि का त्याग न करना। प्रमाद में फंसकर स्वाध्याय (पढ़ना–पढ़ाना) न छोड़ना। देव, विद्वान् और माता–पिता की सेवा में प्रमाद–आलस्य आदि न करना। माता देवी है, पिता देव है, विद्वान् आचार्य देव हैं, वेद का ज्ञाता अतिथि देव है, इन सब की सदा सेवा करना। जो शुभ कर्म हैं उनको करना, अशुभ को नहीं। अप्रमाणिक मिथ्या भाषण कभी न करना।

जो हमारे श्रेष्ठ शुभ धर्मयुक्त कर्म हों उनको ग्रहण करना और विपरीत में जो पाप कर्म हैं उनको कभी न करना। हमारे मध्य समाज में जो वेद के ज्ञाता उत्तम विद्वान्, धर्मात्मा ब्राह्मण हैं उन्हीं का संग करना और उन्हीं की बात पर विश्वास करना अर्थात् कुसंग में नहीं जाना। दान को श्रद्धा से देना, अश्रद्धा से देना, श्रिया से देना, लज्जा से देना, भय से देना और प्रतिज्ञा करके प्रेमपूर्वक देना। यहाँ श्रद्धा से दान देने का अर्थ है जो वेदों से ईश्वर के स्वरूप को, उसके दिव्य ज्ञान, कर्म एवं स्वभाव को जान गया है और यह जान गया है कि यज्ञ में सुपात्र को ही दान दिया जाता है, तो इसे श्रद्धा से दान देना कहा है।

स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'
प्रसन्न मुद्रा में - मुंबई
फरवरी 2021

अश्रद्धा से देने का भाव है कि सत्य को ना जानने पर भी यदि कोई मनुष्य यज्ञ आदि और वेद के विद्वान् ब्राह्मण आदि को दान दे देता है तो इसे अश्रद्धा से दिया दान कहा जाएगा। इसके अतिरिक्त यदि वह कुपात्र को दान दे देता है तो उसका दान व्यर्थ हो जाता है।

''श्रिया देयम्'' अर्थात् अपनी ***''श्री''*** अर्थात् धन में से दान देना।

''ह्रिया देयम्'' का अर्थ है लोक लाज के डर से भी दान करना कि कहीं समाज तुम्हें कंजूस न कहे तथा वेदों में कंजूस होना स्वार्थ है और पाप है। ***''भिया देयम्''*** का अर्थ है भय से देना अर्थात् जब मनुष्य शरीर छोड़ कर चले जाएगा तो उसके साथ में कुछ नहीं जाएगा, उसका दिया हुआ सुपात्र को दान ही इस लोक एवं परलोक में उसका रक्षा करेगा। अतः मौत के डर से भी दान देना, इसे ही भिया देयम् कहा है।

''संविदा देयम्'' का अर्थ है प्रतिज्ञा करके प्रेम से दान देना। कहने का भाव है कि जब कोई किसी यज्ञ में किसी धन राशि का संकल्प करके किसी विद्वान् अथवा सुपात्र को प्रेमपूर्वक दान देता है तो उसे संविदा देयम् कहा है।

जीवन में कभी ज्ञान, कर्म, उपासना में संशय उत्पन्न हो तो वेदों के ज्ञाता जो समान व्यवहार करने वाले, न्यायप्रिय योगी, तपस्वी, धर्मात्मा पुरुष हों उन्हीं का अनुसरण करना, उन्हीं की आज्ञा मानना, यहीं आदेश है, आज्ञा है, यही उपदेश है यही वेद की, उपनिषद् की शिक्षा है।

भगवद्गीता श्लोक 18/38 का भाव यह है कि जो जिज्ञासु वेद विद्या और धर्म प्राप्ति के कर्म करने को उत्सुक होता है तो वह मार्ग पहले तो विष के समान लगेगा परन्तु अंत में अमृत के समान हो जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि जो मनुष्य के बनाए भिन्न–भिन्न मार्ग हैं उनमें जो–जो सत्य है वह स्वीकार करने योग्य है और जो झूठ है उसे स्वीकार करने को नहीं कहा अपितु उसको त्याग करने के लिए कहा है। भगवद्गीता यही भाव प्रकट कर रही है कि ऐसे सत्य को स्वीकार और असत्य का त्याग, खंडन करना पहले–पहले विष के समान लगेगा और बिरला ही कोई जिज्ञासु इस मार्ग पर चल पाएगा। VIV

Pomegranate

Sugandh 'Sudhi'

Pomegranate is not only a very common but a global wonder fruit. Almost all parts of this fruit have tremendous health benefits. **Pomegranates are full of many Important Nutrients and Antioxidants. It is a great source of medicinal properties. It helps in fighting many diseases. This is the one of those fruits which is available throughout the year because of its long shelf life.** Pomegranate is not only a good source of **fiber** that can help weight loss but also for lowering cholesterol, boost metabolism and ease constipation. Pomegranate juice has lots of Antioxidants and vitamin C which has many health benefits and helps in fighting lot many diseases as well.

Some Health Benefits of fruit Pomegranate

- ☞ *Lower Blood Pressure*
- ☞ *Help Fight Arthritis and Joint Pain*
- ☞ *Lower Risk of Heart Disease*
- ☞ *Help Improve Memory*
- ☞ *Relief in stomach pains*
- ☞ *Good for digestion*
- ☞ *Helps in booting immunity*
- ☞ *Help reducing skin wrinkles*
- ☞ *Adds natural shine to hair*
- ☞ *Reduce hair fall*
- ☞ *Helps in treating acne and pimples*
- ☞ *Reduces anemia related problem*
- ☞ *Strengthens gums and teeth*
- ☞ *Multiplies blood cell generation*
- ☞ *Reduces liver related problems*
- ☞ *Help Fight Bacterial & Fungal Infections*

Dry pomegranate seeds and its powder are very common in Indian kitchens. Many curries and chutneys are made with it because of its tangy and sour taste. Jams and jellies made of pomegranate are very common among children in their school tiffin which not only add taste but nutrients also.

For any particular or specific use of pomegranate kindly consult Doctor. VIV

पुस्तक विमोचन

पुस्तक विमोचन "महर्षि दयानन्द : प्रतिरोध की गहराई" पुस्तक का जे.बी.एम. ग्रुप के चेयरमैन श्री सुरेन्द्र आर्य जी ने किया विमोचन

अंग्रेजी एवं हिन्दी के साथ-साथ छह अन्य भाषाओं में भी होगा पुस्तक का प्रकाशन - आचार्य एम. आर. राजेश

महाभारत से उद्धरण

- ☞ पापियों का हृदय तथा उनके नेत्र और मुखादि का विचार ही उनके पापों को बता देता है। जो लोग जानबूझकर किए हुए पाप को महापुरुषों से छिपाते हैं, वे गिर जाते हैं।
- ☞ किसी की भी निन्दा नहीं करनी चाहिए और न किसी भी रूप में किसी की निन्दा सुननी ही चाहिए। यदि कोई दूसरे की निन्दा करता हो तो वहां या तो अपने कान बन्द कर लेने चाहिए अथवा वहां से उठकर अन्यत्र चले जाना चाहिए।
- ☞ लोग मृतक शरीर को काठ और मिट्टी के ढेले के भांति परे फेंककर दो घड़ी रोते हैं और फिर उसकी ओर से मुँह मोड़कर चल देते हैं।
- ☞ पारिवारिक जन तो मृतक शरीर को छोड़कर चले जाते हैं तब एकमात्र धर्म ही उस जीवात्मा का अनुसरण करता है। अत: धर्म ही सच्चा सहायक है। इसीलिए मनुष्यों को सदा धर्म का ही सेवन करना चाहिए।